संजय की कलम से –

कैसे बने जीवन कमल-सम?

कमल-सम जीवन बनाने के लिए सम्बन्ध, धन और प्रतिष्ठा – इन तीनों के प्रसंग में पवित्रता और दिव्यता अपनाने का पुरुषार्थ करना चाहिए। आज हम देखते हैं कि नारी, पुरुष में और पुरुष, नारी में आसक्त होकर जीवन व्यतीत कर रहे हैं। दोनों एक-दूसरे के प्रति दैहिक आकर्षण में आकर सुध-बुध को गँवा बैठते हैं और मर्यादा को छोड़ देते हैं। इस प्रकार वे आत्म-संयम के मुख्य गुण से वंचित हो जाते हैं। मानसिक सन्तुलन की अवस्था खोकर तथा अपनी दृष्टि और वृत्ति को अपवित्र करके वे अपयश के भागी बनते हैं। अपने कुटुम्बियों के मोह-जाल में फँसकर भी मनुष्य अपनी परेशानी के निमित्त स्वयं ही बन जाता है।

अत: मनुष्य को चाहिए कि सबसे स्नेह से व्यवहार करते हुए भी तथा सबके प्रति अपने उत्तरदायित्व को निभाते हुए भी, मोह के पाशों में बंधने वाला पशु न बने बल्कि प्यारा होते भी न्यारा रहे। वह प्रेम करते हुए भी न्यारा रहे। मृदुल होते हुए भी सुदृढ़ता को न छोड़े। आत्मीयता को प्रकट करते हुए भी अपनी आत्मा को न खो बैठे। यह तभी सम्भव होगा जब वह सारे विश्व को ही अपना परिवार मानेगा, संसार को एक मंच मान कर, एक कुशल अभिनेता की न्याईं सम्बन्ध निभाता हुआ भी वास्तविकता में स्वयं को उनसे अलग समझेगा।

इसी प्रकार, धन के होते हुए भी यदि मनुष्य का मन उदार होगा, वह उसे समाज-सेवा का एक साधन मानेगा, उस द्वारा अपनी आवश्यकताएँ पूर्ण करते हुए उसे परोपकार के काम में भी लगायेगा तथा उसे सिद्धि न मान कर एक साधन-मात्र ही मानेगा और साधन की श्रेष्ठता को ध्यान में रखते हुए ही उसे अर्जित करेगा तो उसका जीवन कमल पुष्प-सम बन सकेगा।

यही बात प्रतिष्ठा के बारे में भी कही जा सकती है। मनुष्य को जो सम्मान प्राप्त होता है वह उसके सही परिश्रम का सुखद् प्रमाण है। अत: प्रतिष्ठा अथवा यश एक नया उत्साह लाने का साधन बन सकता है परन्तु यदि वह अभिमान का रूप ले लेता है तो वो मनुष्य के पतन का कारण बन जाता है। यदि मनुष्य पद अथवा प्रतिष्ठा को पकड़े रहने की कामना के वशीभूत हो जाता है तो अन्ततोगत्वा वही पद उसके अपयश का कारण बन जाता है। ज्ञानवान मनुष्य वह है जो इस संसार को एक खेल मानते हुए न तो सफलता में अधिक गर्वान्वित होता है और न ही असफलता से निरुत्साहित बल्कि वह सफलता से प्रेरणा और असफलता से शिक्षा लेकर अपने कदम को और दृढ़ता से, सतर्कता से तथा सूझ से आगे बढ़ाता जाता है। इस प्रकार, इन तीनों प्रकार के क्षेत्रों में अलिप्तता प्राप्त करने वाला मनुष्य सदा शान्ति का रस लेता है, उसके प्रकाशमय जीवन से तमो-राज्य मिट जाता है तथा ज्योति के राज्य अथवा रामराज्य की सुस्थापना स्वयं हो जाती है।

जिन्होंने पूर्वकाल में कमल-सम जीवन व्यतीत किया है, वे ही आज भारत के मन्दिरों में पूजे जाते हैं। उन्हीं के हर एक अंग के नाम के साथ कमल शब्द का प्रयोग होता है जैसे कि कमल नेत्र, कमल मुख, कमल हस्त, कमल चरण इत्यादि। भक्त लोग उन्हीं का गुणगान करते हैं और यदि उनके जीवन में थोड़ा भी दुख हो तो वे उन देव-मन्दिरों में जाकर उनसे शान्ति माँगते हैं क्योंकि उन्होंने अपने जीवन को कमल-सम बनाया था। क्या ही अच्छा हो यदि हम अपने जीवन को उनकी तरह दिव्य तथा कमल-पुष्प के समान अलिप्त बनायें। ■■■

अमृत-सूची

- संजय की कलम से 3
- विधि-विधान और मुकदमेबाजी (सम्पादकीय) 4
- प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के 7
- पत्र सम्पादक के नाम 9
- निरोगी काया में राजयोग का योगदान 10
- स्नेह की पूँजी 12
- योगयुक्त या योगमुक्त जीवन ? 13
- शिव से ध्यान लगाओ (कविता) 16
- नाम बनाएँ, बिगाड़ें नहीं 17
- मन की गुफा में आत्मरस का अनुभव करो 18
- भगवान की पहचान 20
- मैं भी हनुमान (अनुभव) 21
- पति परमेश्वर नहीं 22
- मन रूपी खेत में श्रेष्ठ विचारों की फसल 23
- श्रद्धांजलि 23
- पाप कर्मों के दुखों से कैसे बचें? 24
- हम भारतवासी (कविता) 25
- इतनी मेहनत किसलिए? 26
- कैसे मिलें स्वास्थ्य और खुशी? 27
- मेरा भारत, व्यसन मुक्त भारत 28
- सचित्र सेवा-समाचार 29
- सचित्र सेवा-समाचार 32
- ओमशान्ति ने कराया शान्ति का अनुभव (अनुभव) 34

सम्पादकीय

विधि-विधान और मुकदमेबाजी

आज हम देखते हैं कि विधान-सभाओं में कानून बनाना, उसे पुस्तकों के रूप में छपवाना, फिर कॉलेजों में इस विषय के विद्यार्थियों को कानून पढ़ाना, कानून के विरुद्ध काम करने वाले लोगों को पकड़ने के लिए पुलिस विभाग को सक्रिय रखना, फिर न्यायालयों के मुकदमों की सुनवाई व फैसले की व्यवस्था करना और इसके बाद अपराधी सिद्ध होने वाले को दंडित करने के लिए बड़े-बड़े जेलखाने कायम करना – ये समाज के आवश्यक अंग बन गये हैं। कहा जाता है कि शहरों में अमन और कानून को बनाये रखने के लिए ये सब जरूरी हैं।

स्वराज्य, स्वशासन अथवा स्वतंत्रता का विचित्र अर्थ

बहुत-से लोग यह भी कहते हैं कि अपने ही चुने हुए प्रतिनिधियों अथवा विधायकों द्वारा पारित किये हुए कानून एवं शासन तन्त्र से शासित होना ही सच्ची स्वतन्त्रता है अथवा यही सच्चा स्वराज्य है। वास्तव में 'स्वराज्य' या 'स्व-शासन' का आदिम एवं सही अर्थ तो यह है कि इतनी कानून की किताबें और कानून का कई मंजिला ढाँचा बनाने की जरूरत ही न हो बल्कि मनुष्य स्वयं ही अपने मन, वचन और कर्म पर ज्ञान-अंकुश से शासन करता हो परन्तु समयान्तर में लोगों ने स्व-शासन का यह अजीब ही अर्थ निकाल लिया कि अपने ही प्रतिनिधियों द्वारा कानून पारित किया हुआ हो; वह विदेशियों द्वारा न लादा गया हो।

कानून, वकालत और मुकदमेबाजी

इस प्रकार, आज के समाज की सभ्यता और संस्कृति का एक मुख्य तत्त्व प्रजातन्त्र, प्रजा के बनाये हुए प्रतिनिधियों द्वारा बनाया गया विधि-विधान और उसके अनुसार बनाई गई राजनीति, अर्थनीति, शिक्षानीति इत्यादि हैं। आज समाज में विधायक चुना जाना, वकालत का व्यवसाय करना, न्यायालय में न्यायाधीश पद पाना या पुलिस अथवा कारावास में उच्च अधिकारी बनना, प्रतिष्ठा पाना है। आज लगभग सभी संस्थाओं में कानूनी मामलों में वैतनिक परामर्शक रखे हुए हैं और अच्छी आय वाले व्यापारियों या दुकानदारों ने भी आयकर, क्रयकर या लेन-देन से होने वाली मुकदमेबाजी के लिए स्थाई रूप से वकील रखे हुए हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि आज का समाज कुछ वकालत और अदालत के जोर से चल रहा है और इसे ही लोग कानून का राज्य मानते हैं। इस ढाँचे के बिना अब किसी का काम चलना ही मुश्किल हो गया है, यहाँ तक कि स्वयं सरकार भी मुकदमों के बिना नहीं चल सकती। सरकार ने अपने भी वकील रखे हुए हैं और स्वयं सरकार के विरुद्ध भी अनेकानेक मुकदमे हैं। कुछ लोगों का तो कहना है कि सबसे अधिक मुकदमे सरकार के विरुद्ध या सरकार द्वारा किये हुए हैं।

कानून भी जटिल, महंगा और समय-भक्षी

आज जब हम कानून की कोई किताब उठाकर देखते हैं तो उसमें इतनी बार 'या', 'अथवा', 'कोष्ठक'

परिच्छेद, अनुच्छेद इत्यादि विकल्प होते हैं कि बात मत पूछिये। कानून लिखने में ऐसा प्रयास किया गया होता है कि कोई भी व्यक्ति उस कानून की पकड़ से छूट न पाये किन्तु वकील लोग व्याकरण और शब्दशास्त्र में इतने 'निपुण' होते हैं कि वे शब्द, वाक्यांश या परिच्छेद का ऐसा अर्थ निकाल ही लेते हैं जो उनको अनुकूल पड़ता हो और वे उसके लिए पिछले निर्णय भी अपने पक्ष में पेश करते हैं।

आज कानून की व्यवस्था भी ऐसी है कि एक अदालत में जो निर्णय हो जाये उसके विरुद्ध उससे उच्च न्यायालय में आवेदन किया जा सकता है। इसका एक अर्थ यह भी लिया जा सकता है कि पहली अदालत में ठीक निर्णय नहीं हुआ। बहुत बार ऐसा देखा भी जाता है कि ऊँची अदालत में, नीचे की अदालत के निर्णय को रद्द कर दिया जाता है। इससे स्पष्ट है कि यदि किसी के पास इतनी आर्थिक क्षमता न हो अथवा उसके पास इतना समय एवं मनोबल न हो कि वह उच्च न्यायालय में जाये तो वह न्याय से वंचित रह जायेगा।

सत्य और झूठ

फिर न्यायालय का जो वर्तमान ढाँचा है, उसमें हम यह भी देखते हैं कि किस प्रकार वहाँ झूठ पनप रहा है। जो मुकदमा करता है और जिस पर मुकदमा होता है, वे दोनों और उनके अपने-अपने पक्ष के गवाह शपथ लेकर यह कहते हैं कि 'हम जो कुछ कह रहे हैं, सोच-समझ कर अपने विश्वास से ठीक कह रहे हैं।'

अब चूँकि मुकदमे में एक पक्ष की जीत और दूसरे पक्ष की हार होती है, इससे सिद्ध होता है कि अवश्य ही एक पक्ष ने तो झूठ कहा ही है। परन्तु प्राय: झूठ कहने वालों को झूठ का दण्ड नहीं दिया जाता क्योंकि उनके झूठ के विरुद्ध सामान्यत: कोई अभियोग नहीं करता। इस प्रकार, न्यायालय में कसम खाकर या सोच-समझकर, दूसरों के सामने झूठ बोलने की भी आदत बहुत मुकदमाबाज लोगों को पड़ जाती है। पुनश्च, जिनकी जीत होती है, वे भी कई बातों में झूठ बोलते होंगे, यह भी सम्भव है। इस प्रकार, कानून की पकड़ से बचने के लिए भी झूठ पनप रहा है।

जीत-हार का प्रश्न

इसके अतिरिक्त, जब दो व्यक्तियों के बीच का मामला उनसे बाहर दूसरों के हाथों में चला जाता है तो जीत-हार की भावना, मान-अपमान का प्रश्न, झूठे साबित होने का डर मनुष्य के मन में पैदा हो जाता है। तब वह जोश में आकर अथवा मजबूरी से मुकदमे को जीतने की होड़ लगा लेता है और इसमें उसका कितना भी पैसा और कितना भी समय खर्च हो जाए, तो भी वह परवाह नहीं करता है। इसका परिणाम यह होता है कि मुकदमाबाजी पर उसका बहुत पैसा खर्च हो जाता है। इस तरह के चक्रव्यूह में पड़कर कितने ही लोग चिन्ता और अशान्ति मोल ले लेते हैं और कितने ही लोग अपनी पूँजी का एक बड़ा हिस्सा मुकदमाबाजी में लगा बैठते हैं। इससे कई व्यक्तियों और परिवारों के बीच आगे के लिये मनमुटाव और तनाव पैदा हो जाता है और इस प्रकार मुकदमे के फैसले के बाद भी उनके मन में आग सुलगती रहती है।

अपार जन-शक्ति और धन राशि का व्यय तथा परेशानी

इस प्रकार हम देखते हैं कि आज हर देश के काफी संख्या में बुद्धिजीवी लोग कानून की किताबें लिखने, छापने, पढ़ने, वकालत करने और उनके आधार पर निर्णय करने तथा अपराधी को दंडित करने के व्यवसाय में ही लगे हुए हैं। वे अपने जीवन के सृजनात्मक काल की अधिकतर शक्ति इस कार्य में ही लगा रहे हैं। सरकार, विद्यार्थी अथवा उसके माता-पिता अपना बहुत-सा धन कानून और न्याय के व्यवसाय को बनाये रखने पर ही लगा देते हैं और मुकदमे में उलझे हुए लोगों का हर वर्ष करोड़ों रुपये का जो धन इसमें खर्च होता है, उसका तो हिसाब लगाना ही कठिन है। वे तो न्यायालय की स्टेम्प ड्यूटी, वकीलों की फीसें और हर आये दिन न्यायालय में पेशी से परेशान ही हो जाते हैं।

न्याय मिलता है परन्तु समाज न्यायशील एवं पवित्र नहीं बनता

कोई कह सकता है कि यह सब धन और समय व्यर्थ

थोड़े ही हो रहा है? इससे तो लोगों को न्याय ही मिलता है और समाज में तानाशाही की बजाय कानून का राज्य चलता है, कानून के सामने हर व्यक्ति बराबर है। हाँ, किसी हद तक यह कहना ठीक भी है परन्तु हमारे कहने का भाव तो यह है कि अमन और कानून के राज्य का वास्तविक स्वरूप तो वह है जिसमें व्यक्ति स्वयं स्वभाव से ही शान्त हो और दूसरों की शान्ति में भी विघ्न न डालता हो कि जिसके लिए कानून और दण्ड की व्यवस्था करनी पड़े। यदि ऐसा हो सके तो स्वत: स्पष्ट है कि कानून के ऐसे परिधानों की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। एक कहावत भी है कि 'मियाँ बीवी राजी तो क्या करेगा काजी।'

सुधार नहीं

फिर हम यह भी देखते हैं कि कानून का ढाँचा तो अपराधी को पकड़ने और दंडित करने के लिए बनाया गया है। उसमें मनुष्यों की वृत्तियों को सुधारने के लिये कोई कदम नहीं उठाया जाता है। मान लीजिये कि किसी व्यक्ति को अपराध करने के दण्डस्वरूप, तीन वर्ष का कारावास मिला। वह जेल से छूटने के बाद पुन: भी अपराध कर सकता है। तीन वर्ष की इस अवधि में उसके सुधार के लिये कोई उपाय नहीं किया जाता बल्कि अन्य अपराधियों के बीच रहकर वह अपराध के अन्यान्य तरीके भी सीख जाता है। अत: स्पष्ट है कि कानून के वर्तमान ढाँचे-साँचे से समाज का लक्ष्य सिद्ध नहीं होता। कानून बनाते रहना और उसे भंग करने वालों को दण्डित करते रहना – यह समस्या का सही हल नहीं है। समस्या का हल तो इसी में है कि मनुष्य को प्रारम्भ से ही ऐसी शिक्षा मिले जिससे उसका जीवन पवित्र, प्रिय और लोक-हित तथा स्वान्त: सुखानुकूल हो।

अपराध की प्रेरक दूषित प्रवृत्तियों का शुद्धिकरण

दण्डसंहिता में जिन-जिन अपराधों के लिये चर्चा है अथवा जिन कानून विरोधी मानवी कर्मों को लेकर कानून बनाये गये हैं, उनका यदि सूक्ष्म अन्वेषण किया जाये तो हम इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि इनके मूल में मनुष्य की कोई-न-कोई दूषित-प्रवृत्ति ही है।

उदाहरण के तौर पर स्त्रियों से छेड़-छाड़, बलात्कार, लाज लूटने का यत्न, वेश्यागमन, अपहरण इत्यादि अपराधों के मूल में मनुष्य की पाशविक वृत्ति अथवा निरंकुश काम वासना ही है।

इसी प्रकार, कत्ल, अग्निकाण्ड, दूसरे की सम्पत्ति का नाश, हिंसा, अशान्ति भंग करने वाले सभी कर्म, मानहानि इत्यादि अपराधों का जन्म, क्रोध, घृणा, द्वेष या प्रतिशोध की भावना से होता है।

वस्तुओं में मिलावट, रिश्वत, ठगी, धोखेबाजी, लेन-देन में बेईमानी, बिक्री कर, क्रयकर आदि में चोरी, जखीरा अन्दोजी, चोरबाजारी आदि अनेक अपराध प्राय: लोभ के कारण ही होते हैं। पक्षपात, भाई-भतीजावाद, अन्याय आदि-आदि मनोवृत्ति से सम्बन्धित अपराधों के मूल में सदा मोह छिपा रहता है। ऐसे ही हिंसा, मान-हानि, विध्वंस आदि के अनेक अपराध मनुष्य के अहंकार को चोट पहुँचने के प्रतिफल होते हैं।

अत: यदि मनुष्य की इन मनोवृत्तियों का शुद्धिकरण किया जाये तो उसके मनोपरिवर्तन के परिणाम स्वरूप घर, परिवार, देश और समाज का वातावरण शुद्ध हो सकता है जहाँ शान्ति का स्थायी एवं सच्चा स्वराज्य हो और ऐसा करना समाज का कर्त्तव्य भी है। परन्तु यह कार्य ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग के बिना नहीं हो सकता। जब इस दिव्य साधन द्वारा नर-नारी तथा बाल-वृद्ध का मनोपरिवर्तन होता है तब एक नए समाज एवं एक नयी सभ्यता की स्थापना होती है जिसे 'सतयुग', 'दैवीराज्य' या 'रामराज्य' कहते हैं। उसमें न कोई अपराधी होता है, न दण्ड-विधान। न कोई आज की तरह शासक होता है, न शासित अर्थात् लोग स्वभाव से ही प्रेममय एवं चरित्रवान होते हैं। ऐसी ही सभ्यता के पुनर्निर्माण के लिए हमें अब ईश्वरीय कानून की शिक्षा मनुष्य को देनी चाहिए।

प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के

प्रश्न- बाबा हमें कौन-सा पाठ पक्का करा रहे हैं?

उत्तर- बाबा हमको यह पाठ पक्का करा रहे हैं कि विदेही और ट्रस्टी बनो। न देह की याद आये, न कोई देहधारी की याद आये। देखो, शिव भोला भगवान कितना मीठा, कितना प्यारा है और हम उसके बच्चे हैं तो हम भी कितने अच्छे हैं! हमारे जैसा कोई बच्चा नहीं, न्यारा और प्यारा। सबकी सूरत देखो, कितने अच्छे लग रहे हैं क्योंकि देह, देह के सम्बन्ध से न्यारे हैं। यह बात बहुत बड़ी और अच्छी है। दूसरा, जिधर देखती हूँ बाबा ही नज़र आता है क्योंकि हरेक को बाबा याद है ना। तो हमको कौन याद आयेगा! बाबा के सिवाए और कोई याद नहीं आता। बाबा भी कहता है, मैं भी तुम बच्चों के अलावा अन्य किसको याद करूँगा? बाबा बच्चों को जानता है, बच्चे भी बाबा को जानते हैं।

मम्मा, बाबा को सदा ही ऐसे देखते-देखते मम्मा बन गयी। बाबा क्या सुना रहा है, उसे उसी घड़ी समा लेती थी और वह स्वरूप में दिखाई पड़ता था। यह मम्मा की खूबी (विशेषता) थी। कभी इधर-उधर नहीं देखा होगा। मम्मा की नज़रों में – मैं आत्मा हूँ, मेरा बाबा है, सारा अटेन्शन इस पर होता था। हमने मम्मा को कभी टेन्शन में नहीं देखा। मम्मा स्पेशल थी। हम साक्षी हो करके देखती थी कि इनको मम्मा क्यों कहते हैं? गम्भीरता, धैर्यता, सत्यता, पवित्रता, नम्रता ये पाँचों गुण मम्मा में नेचुरल थे। अभी जिन्हें भी ये गुण अपने में लाने हों वो मम्मा को देखो। दीदी-दादी भी हैं परन्तु मम्मा, फिर भी मम्मा है। पवित्रता अन्दर नेचुरल है तो सत्यता काम करती है। मम्मा सबसे न्यारी और सबकी प्यारी थी। कोई नहीं कहेगा कि मम्मा मेरी नहीं है, मम्मा केवल अमुक की ही है, नहीं। मम्मा प्यारी है, मीठी है। हर एक को मम्मा अपना समझती है। अभी सभी मम्मा की दृष्टि लो, देखो, कितनी अच्छी फीलिंग आती है। बाबा कहते हैं, बच्चे, जिन बच्चों में शान्त रहने की शक्ति होगी उनका वायब्रेशन यहाँ से विश्व में जायेगा इसलिए इस शान्ति की शक्ति को बढ़ाते रहना है।

भट्ठी में रहना माना एक बाप की बातें ही सामने रखना और कुछ नहीं। तू मेरा, मैं तेरा। भट्ठी में बैठना माना जो बात याद करनी है उसे कभी भूलना नहीं है और जो बात भूलने वाली है उसको याद नहीं करना है। भट्ठी यानी दृढ़ संकल्प में स्थिर रहना। सच्चे दिल पर साहेब राज़ी, हिम्मते बच्चे मददे बाप और नियत साफ माना अन्दर की भावना शुद्ध है, तो जो संकल्प करते हैं वो साकार हो जायेगा।

प्रश्न- कई आत्मायें ज्ञान में आती हैं पर पूरी धारणाएँ नहीं करती हैं तो हमें क्या करना है?

उत्तर:- मैं समझती हूँ, अभी यह क्वेश्चन जरूरी नहीं है। खान-पान की और मुरली की धारणा एक्यूरेट नहीं भी करें या और कोई एक्टीविटी में भी इनवॉल्व नहीं हों, कोई हर्जा नहीं, उसमें तुम्हारा क्या जाता है! हमें अपना

समय, श्वास और संकल्प सफल करना है। सदा ही मेरे संकल्प शान्त, शुद्ध हों, कभी भी शरीर पूछके नहीं छूटता है, अचानक ही छूटता है तो तैयार रहना चाहिए। बाकी दूसरों का इतना ख्याल नहीं करना है, हर एक का पार्ट अपना है, अपने पद अनुसार ही तो पुरुषार्थ करेंगे।

प्रश्न- जब आप बाबा की वाणी पढ़ती हैं तो क्या महसूस होता है?

उत्तर- समझदार वो जिसे देहभान को छोड़, देही-अभिमानी स्थिति में रहने की लगन हो। मैं जब बाबा की वाणी पढ़ती हूँ तो ऐसे अनुभव होता है, जैसे बाबा अपने मुख से ज्ञान अमृत पिलाता है। बाबा शिक्षा, सावधानी, समझानी जी भरके देता है कि बच्चे सावधान रहो, खबरदार रहो, होशियार रहो। बाबा के जो इशारे मिलते हैं वो ध्यान पर रखो।

हर समय, हर संकल्प बाबा साथ देता है। मन ने बाबा की बातें सुनते-सुनते तन को भी अचल, अडोल, स्थिर बना दिया है। स्थिर बुद्धि हैं तो अडोल, अचल हैं। छोटी-छोटी बातों में चलायमान, डोलायमान होना, यह शोभता नहीं है। मेरा बाबा इतना मीठा है, जो कभी भी किसी बच्चे का उदास चेहरा नहीं देख सकता है। जहाँ भी जाओ, चलते-चलते मुस्कराओ, चेहरा उदास न हो। समय थोड़ा है, कभी भी कोई भी परीक्षा आ सकती है। वो आयेगी, चली जायेगी, हमारा काम है मायाजीते, जगतजीत बनना।

प्रश्न- जो बाबा से अथाह ज्ञान-भण्डार मिला है, उसका क्या करना है?

उत्तर- बच्चों में बाबा ने बड़ी अच्छी उम्मीदें रखी हैं। बाबा का बनने से जो सुख मिला है, उसे बांटने से वन्डरफुल खुशी होती है। बाबा का बनने से दु:ख सदा के लिए भाग जाता है। जो बात बीती वो भूल जाती है, कल जो आने वाली है, उसे देख लेंगे।

जो बाबा सुनाता है उस पर विचार सागर मंथन करो तभी औरों को सुना सकेंगे। ऐसा सुनाओ जो उनके दिल को बाबा की याद कभी भूले नहीं। एक बाबा ही याद आये और कोई बात याद ही नहीं आये। अभी यह ख्याल रखो कि शरीर छोड़ने के समय संकल्प अच्छा हो, जो बाबा को कह सकूँ, बाबा मैं आ रही हूँ आपके पास। मैं ऐसी प्रैक्टिस करती हूँ क्योंकि बाबा ही कहता है कि एवररेडी रहो परन्तु घबराओ नहीं। मैं घबराती नहीं हूँ। बाबा ने पलकों में बिठाया है। बड़ी खुशी की बात है। कौन है जिसको दिन-रात पलकों में बाबा दिखाई पड़ता है? ऐसा कोई हो तो हाथ उठाओ। बाबा इतना सुख देता है, बात मत पूछो तब तो उसे भगवान कहते हैं। इसलिए मैं तो मांगती नहीं हूँ, मुझे सुख दो। भगवान, भाग्यविधाता हमारे हाथों में भाग्य देता है। जो भगवान ने दिया है, वो बांटो। जहाँ पर कदम रखो वहाँ खुशी की दुआयें मिलेंगी। दुआ मांगी नहीं जाती है, यह तो अपने आप मिल जाती है। इसके लिए केवल बाबा के साथ रहना है, मैं तो सदा बाबा के साथ हूँ।

पवित्रता है तो सत्यता से अच्छी तरह से काम ले सकते हैं। कैसी भी परीक्षायें हैं पर सत्यता से धैर्यता आती है। फिर गम्भीरता और नम्रता से हाँ जी करो, बस। कभी भी अभिमान का इतना भी अंश मात्र न हो। तो पक्का है, हम बाबा के आगे बैठे-बैठे, देखते-देखते फरिश्ता बन गये हैं। जहाँ पांव रखो ना, वो धरती हमको उड़ता पंछी बना देती है। यह रिहर्सल चलती रहे। जैसे किसी का नाम भले संतोष है लेकिन कभी किसी कारण से अगर असंतुष्ट भी हो जाते तो उसे क्या संतोष कहेंगे! सन्तुष्टता है तो सरलता भी हो, मधुरता भी हो तो सन्तुष्टता अच्छा काम करेगी। अगर सरलता, मधुरता नहीं है तो समाने की शक्ति, समेटने की शक्ति... कैसे आयेंगी। बाबा नज़रों में है, बाबा की नज़रों में हम हैं, तो जैसा भी दृश्य है वो बदल जाता है और मैं बाबा के साथ ऐसे बैठी रहती हूँ।

पत्र सम्पादक के नाम

फरवरी अंक में, संजय की कलम से 'योग द्वारा मन-बुद्धि पर नियंत्रण' लेख बहुत ही अच्छा लगा। सम्पादकीय 'काल चक्र में प्रेम की दास्तान' बहुत अनुकरणीय है। प्रेम में बहुत शक्ति है। प्रेम द्वारा ही सबको अपना बनाया जा सकता है। प्रेम कब, कैसे विकृत रूप में आया, अच्छे तरीके से समझाया गया है। वास्तव में यह सारा विश्व नाटक ही एक लम्बी प्रेम कहानी है। परमात्म प्रेम से सतयुगी दुनिया में जाने का सौभाग्य प्राप्त हो सकता है। 'खुश रहने के लिए महत्वपूर्ण बिन्दु' लेख बहुत ही सराहनीय है। यदि जीवन में सब कुछ है लेकिन खुशी नहीं है तो जीवन सूना हो जाता है। जो स्वयं खुश नहीं तो दूसरों को खुशी कैसे दे सकता है इसीलिये बाबा मुरली में कहते हैं, 'खुशी जैसी खुराक नहीं।' चयनित लेखों के लिये, छायाचित्रों के अच्छे चयन-संकलन-प्रकाशन के लिए बहुत आभार।

--ब्रह्माकुमार रतन भाई, सिकन्दराराऊ, हाथरस (उ.प्र.)

ज्ञानामृत का फरवरी, 2019 अंक तमनार के ब्रह्माकुमारी कार्यालय में पढ़ने को मिला। मन गद्गद् हो गया जब संजय की कलम से 'योग द्वारा मन-बुद्धि पर नियंत्रण' लेख पढ़ा। संपादकीय 'काल-चक्र में प्रेम की दास्तान' पढ़कर प्रेम के वास्तविक मर्म को समझा। इसके अलावा 'ऐसी शिवरात्रि अबकी बार', 'सजागृह में बजे रूहानी साज', 'गरीब पैदा होना पाप नहीं, गरीब मरना पाप है' जैसी कई रचनाओं ने मन में नवीन चिंतन पैदा कर, मन को गहराई तक झिंझोड़ कर रख दिया। एक स्तरीय आध्यात्मिक पत्रिका के सफल प्रकाशन पर आत्मीय बधाई व अनंत शुभकामनाएँ।

--डॉ.प्रमोद सोनवानी पुष्प, तमनार, रायगढ़ (छ.ग.)

फरवरी, 2019 का अंक अंतर्चक्षु खोलकर, तन और मन को प्रकाशमय (ज्ञानयुक्त) बना देने वाला अत्यन्त प्रशंसनीय है। 'अन्न की बर्बादी एक अक्षम्य अपराध है' लेख से अन्न के सदुपयोग की प्रेरणा मिलती है। मर्यादा की महत्ता पर प्रकाश डाला गया है जो शिक्षाप्रद है। खुश रहने के महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर विचार करने से राजयोग में सहयोग प्राप्त होता है। सभी लेख सामयिक एवम् प्रेरणादाई हैं। अव्यक्त पालना के 50 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर हम सभी भाई व बहनों को संकल्प लेना चाहिए कि सच्ची ज्ञान-मंजूषा ज्ञानामृत से सतत् ज्ञान प्राप्त करते रहें।

डॉ.रामस्वरूप गुप्त, मैगलगंज (खीरी)

ज्ञानामृत पत्रिका का दिसम्बर, 2018 का अंक मुझे हल्द्वानी शहर में राष्ट्रीय सरस मेले में ब्रह्माकुमारी स्टाल में पढ़ने को मिला। पत्रिका ज्ञान का भण्डार है। इसमें हर समस्या का समाधान बतलाया गया है। यह ज्ञान का घूँट पिलाने वाली पत्रिका है। ज्ञानअमृत बाँटने के लिए मैं तहे दिल से धन्यवाद करता हूँ।

--भगवत सिंह बिष्ट 'लोकमित्र', बागेश्वर

आप तब तक अपनी ताकत नहीं पहचान पाते, जब तक कि ताकतवर होना एक मात्र विकल्प न हो

निरोगी काया में राजयोग का योगदान

■■■ ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

पिछले अंक में हमने जाना था कि भौतिक या आध्यात्मिक सभी सुखों की प्राप्ति के लिए काया का निरोगी होना अति अनिवार्य है। आयुर्वेद के अनुसार निरोगी वही है जिसका आहार शरीर के लिए हितकारी है, जो मिताहारी है और जिसकी जीवनचर्या प्रकृति के अनुकूल है। स्वास्थ्य पर मुख्य रूप से विचारों का, भोजन का और पूर्वकाल के किए गए कर्मों का गहरा प्रभाव पड़ता है। इनमें से विचारों और भोजन के प्रभाव की चर्चा पिछले अंक में की गई थी, इस अंक में पढ़िए, पूर्व जन्म या इस जन्म के कर्मों का शरीर और उसकी आरोग्यता पर क्या प्रभाव पड़ता है –

पूर्व जन्म के या इस जन्म के कर्मों का प्रभाव

रोग उत्पत्ति में पूर्व कर्मों का या इस जन्म के कर्मों का भी बहुत हाथ है। महात्मा गांधी ने कहा है, आत्मा जैसे-जैसे पापों से छुटकारा पाती जाती है, वैसे-वैसे उसका शरीर भी निरोगी होता जाता है। प्राचीनकाल में लोग इस सत्य को जानते थे। उस समय के रोगी को स्वयं पर लज्जा आती थी, यह सोचकर कि मेरे द्वारा किया गया कोई पापकर्म रोग के रूप में उघड़ गया है।

पापकर्म से आत्मबल नाश

पाप, आत्मा को कमजोर बना देता है। एक उदाहरण लीजिए, एक व्यक्ति चोरी या छीना-झपटी करता है। उसका यह कर्म उसे हमेशा डर से घिरा हुआ, भगौड़ा, अस्थिर, छिपकर जीने वाला, लोगों से नज़रें न मिला सकने वाला बना देता है। वह चोरी करके या छीनके भागेगा सिर पर पाँव रखकर। दूसरी तरफ, दान देने वाला या भलाई करने वाला निश्चिन्तता के साथ खड़ा रहेगा, लोगों के सामने रहेगा और लोगों से नज़रें मिलायेगा, चित्त की स्थिरता के साथ जीयेगा। प्रथम आत्मा अपने कर्मों से आत्मबल खो देती है और दूसरी प्रकार की आत्मा श्रेष्ठ कर्मों से आत्मबल को बढ़ा लेती है।

शरीर गढ़ने में कर्मों का हाथ

जब शरीर छूटता है तो आत्मा अगली यात्रा पर जाती है और कर्म अनुसार आत्मबल या आत्महीनता को भी साथ ले जाती है। यह आत्मा ही बीज है जो माँ के गर्भ रूपी जमीन से शरीर रूपी पेड़ का निर्माण करती है। हम जानते हैं यदि बीज अविकसित, अर्धविकसित या सड़ा हुआ हुआ हो तो या तो उससे पौधा उगेगा ही नहीं और यदि उगेगा तो वह भी पूर्ण विकसित नहीं हो पायेगा। कद छोटा रह जायेगा, छोटेपन में ही हरियाली की जगह पीलापन आ जायेगा, फल-फूल नहीं दे पायेगा या समय से पहले ही काल-कलवित हो जायेगा। आत्मबल से हीन आत्मा भी अविकसित बीज की तरह ही है जो माँ के गर्भ में सब तत्व मौजूद होते हुए भी अपनी अशक्तता के कारण तत्वों के संयोजन से सर्वांग स्वस्थ शरीर का निर्माण नहीं कर पाती। कई बार तो शरीर का निर्माण बिल्कुल ही नहीं हो पाता, निर्माण हो भी जाता है तो अल्पकाल में ही काल के गाल में चला जाता है। कई बार विकलांग रह जाता है या बनावट में भद्दापन आ जाता है। कई बार तन ठीक होते भी मन विक्षिप्तों जैसा रह जाता है। माता रूपी जमीन तो वही होती है पर आत्मा रूपी बीजों की अपनी-अपनी गुणवत्ता के कारण एक शरीर जन्मजात स्वस्थ और सुंदर तथा दूसरा अस्वस्थ और कुरूप हो सकता है। अत: शरीरों के गढ़ने में भी हमारे कर्मों का हाथ है।

मौलिक गुण की कमी से रोग

जैसे शरीर पाँच तत्वों से मिलकर बना है ऐसे आत्मा में सात मौलिक गुण हैं। किस प्रकार के पाप कर्म से किस मौलिक गुण को नुकसान पहुँचता है और उस मौलिक गुण के नुकसान से शरीर की कौन-सी प्रणाली बिगड़ जाती है या बीमार हो जाती है, यह जानना भी बहुत रुचिकर है। आत्मा के सात मूल गुण हैं – ज्ञान, पवित्रता,

शान्ति, प्रेम, सुख, आनन्द और शक्ति। अगर कोई व्यक्ति हिंसा करता है तो अवश्य ही उसमें प्रेम और शान्ति रूपी मौलिक गुण घटते जायेंगे। प्रेम और शान्ति के अभाव में हृदयतंत्र और श्वसन-तंत्र रोगग्रस्त होते हैं। इसी प्रकार सत्य ईश्वरीय ज्ञान के अभाव में मस्तिष्क के रोग, पवित्रता के अभाव में त्वचा और इंद्रिय रोग, सुख के अभाव में पाचनतंत्र के रोग, आनन्द के अभाव में उत्सर्जन तंत्र के रोग और आत्मा की शक्तियों के अभाव में तंत्रिका तंत्र के रोग मानव को घेर लेते हैं।

राजयोग से निरोगी काया की ओर

कहावत है, तन से सेवा करो तो तन निरोग रहेगा, धन से सेवा करो तो धन बढ़ेगा। भावार्थ यह है कि किया गया भला, लाभ बनकर लौटता है। अत: वर्तमान और भविष्य – दोनों कालों में निरोगी काया का सुख चाहने वाले को मनसा, वाचा, कर्मणा – तीनों रूपों में दुखदायी कर्मों से, पापकर्मों से अपने को अवश्य बचा लेना चाहिए। पापों से बचाने और पुराने पापों को दग्ध करने में राजयोग का अभ्यास बहुत सहायक है। राजयोग में हम ज्योतिस्वरूप आत्मा को, बिन्दु रूप ज्योतिस्वरूप परमपिता परमात्मा से जोड़ते हैं। इस प्रक्रिया में सर्वशक्तिवान परमात्मा पिता की शक्तिशाली किरणें जब आत्मा पर पड़ती हैं तो आत्मा के पुराने पाप जल जाते हैं, मौलिक गुण संतुलन में आने लगते हैं जिससे हीन कर्मों से उसे स्वत: विरक्ति होने लगती है। राजयोग द्वारा ईश्वरीय आनन्द की अनुभूति करके आत्मा क्षुद्र सांसारिक सुखों में उलझने या उनकी प्राप्ति के लिए मानसिक शक्ति को जाया करने से बच जाती है। भीतर का सुख पाकर वह अंतर्मुखी होने की अभ्यासी हो जाती है और इंद्रिय अधीनता से मुक्ति पाकर स्वयं भी मालिक बन जाती है। इस अवस्था में कर्मों पर स्वाभाविक ध्यान रहने से श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्त होती जाती है और उसका पुण्य का खाता वृद्धि को पाता जाता है। इस प्रकार कर्मबंधनों की जकड़ ढीली पड़ती जाती है और रोग, शोक से मुक्ति मिलती जाती है। अत: राजयोग निरोगी काया प्राप्ति का सरलतम और सर्वोत्तम तरीका है।

आध्यात्मिक जन रोगी क्यों?

कई लोग प्रश्न पूछते हैं कि अध्यात्म के मार्ग पर चलने वाले लोगों का मन शुद्ध होता है, भोजन संयमित होता है और पापों से भी वो बचकर रहते हैं फिर उन्हें रोग क्यों लगते हैं?

इस प्रश्न के उत्तर में एक बात तो यह है कि शरीर पर वंशानुगत रोगों का प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता। पिता या घर के अन्य बड़ों के मधुमेह से ग्रसित होने के कारण पुत्र में भी उस रोग के चिन्ह प्रकट हो जाते हैं। दूसरी बात यह है कि शरीर को विकसित करने वाले पाँच तत्व आज प्रदूषण की स्थिति में हैं। आज तो पेड़-पौधे भी दूषित वातावरण में पल-बढ़ रहे हैं। रेडियो विकिरण और अणु विस्फोट की धूलि दूध और फलों पर कुप्रभाव डालती है। कई विषाणु, रोगाणु प्रदूषित वातावरण में उत्पन्न होते ही रहते हैं जिनसे अध्यात्म के पथ पर चलने वाला राही बच नहीं पाता। कई संक्रामक बीमारियाँ होती हैं जो पास आने मात्र से लग जाती हैं। एक के सांस की हवा वातावरण में घुलकर दूसरे की सांस तक पहुँचती ही है। रासायनिक खाद से होने वाली पैदावार भी शरीर को नुकसान पहुँचा रही है। पाँचों तत्वों का हम सब मिलकर उपभोग कर रहे हैं। योगीजन किसी अन्य दुनिया में तो रहते नहीं, तो हवा-पानी के प्रदूषण से बच नहीं सकते। अत: प्रदूषणजनित रोगों से अध्यात्मवादी और भौतिकवादी दोनों ही ग्रसित होते हैं।

साधना का भार क्यों ढोया जाये?

यदि दोनों ग्रसित होते हैं तो फिर प्रश्न आता है कि साधना का भार क्यों ढोया जाये? इसका उत्तर यह है कि संयमी, अपने संयम के आधार से रोग की विकरालता से अपने को काफी हद तक बचा लेता है। वह आध्यात्मिक ज्ञान और राजयोग द्वारा इतना मनोबल एकत्रित कर लेता है कि कष्ट या रोग उसके मन पर हावी नहीं होता, सहनशीलता के कारण कष्ट उसे भासता नहीं है। उसकी

आंतरिक शान्ति रोग के कारण बाधित नहीं होती। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के संस्थापक पिताश्री ब्रह्मा बाबा ने शारीरिक व्याधि की अवस्था में भी अपने महान विचारों से, तेजस्वी चेहरे से और दिव्य कर्मों से कितनी ही बार डॉक्टरों को चकित कर दिया। वर्तमान में हमारी निमित्त दादियाँ भी कभी हॉस्पिटल जाती हैं तो डॉक्टरों को आध्यात्मिक ज्ञान देने के निमित्त बन जाती हैं। उनके स्थिर चित्त का अनुभव करके और रूहानी दृष्टि पाकर डॉक्टर भी अपने को धन्य समझते हैं। राजयोग के अभ्यास से व्यक्ति के पूर्व कर्मों के या इस जन्म के भी कर्मों के बंधन कटते जाते हैं। इस कारण उसे रोग में सूली से कांटा हो जाने का अनुभव होता है।

दूसरी तरफ, जिसे आत्मा की अनुभूति नहीं, वह अपने को शरीर समझ, शारीरिक जीवन जीते हुए कष्टों से घबरा जाता है, चिंता करता है। अपनी गलत सोच के कारण एक रोग के साथ-साथ अन्य रोग लगा लेता है या उसी रोग को बढ़ा लेता है।

सार यह है कि संयम, नियम, पवित्रता और योगाभ्यास के द्वारा रोगों का शमन किया जा सकता है। दवा भी काम करती है पर हम केवल दवा के आश्रय पर ही ना जीयें, दुआओं का, संयम का और राजयोग का बल भी साथ रखें। (समाप्त) ■■■

स्नेह की पूँजी

■■■ **ब्रह्माकुमार बसन्त, भवानी नगर, जयपुर**

धन, शरीर निर्वाह अर्थ एक महत्वपूर्ण साधन है इसलिए आज मनुष्य दिन-रात भाग-भाग कर धन कमाता है। उस धन के द्वारा स्वयं तथा परिवार के लिए खुशी और सुख-शान्ति की चाहना रखता है लेकिन धन कमाने की इस भागदौड़ में अनेक आत्माओं से जाने-अनजाने ईर्ष्या, घृणा और बेईमानी का हिसाब बना लेता है इसलिए सम्मान, प्यार और विश्वास खो देता है।

धन कमाना गलत नहीं है लेकिन इसके साथ-साथ सच्चे स्नेह की पूँजी इकट्ठी करनी भी जरूरी है। बिना स्नेह के आज वह नफरत, शक तथा अकेलेपन की अग्नि में जल रहा है। हम देखते हैं कि जितनी भी मशीनें काम में ली जाती हैं उन्हें सहज बनाने के लिए स्नेहक (Lubricant) आदि इस्तेमाल किए जाते हैं। ऐसे ही सच्चे रूहानी स्नेह से रिश्तों रूपी मशीन, जिसमें जंग लग गई है, बहुत सरलता से चल पाएगी।

स्नेह से सहयोग व सहयोग से सफलता

कुछ वर्षों पहले तक गाँवों में जब किसी के घर में कोई विशेष कार्य होता था तो सभी रिश्तेदार और आस-पास के लोग बड़े प्यार से सहयोगी बनते थे जिससे बिना अधिक खर्च किए कार्य सुन्दर रीति से संपन्न हो जाता था। आज बहुत धन लुटाकर भी न तो वैसी खुशी, आनंद और सफलता प्राप्त होती है, न कार्य ही श्रेष्ठता से सम्पन्न हो पाता है क्योंकि दिलों में दूरियाँ बढ़ गई हैं।

जहाँ स्नेह वहाँ मेहनत नहीं

स्नेह, मेहनत को समाप्त कर देता है। जैसे माँ बच्चे के लिए कितनी मेहनत करती है लेकिन स्नेह होने के कारण वो मेहनत महसूस नहीं करती। जीवन में रिश्तों की भूमिका अहम होती है तथा रिश्ते बनते हैं त्याग से। जहाँ स्नेह होता है तो त्याग स्वत: हो जाता है। सबसे सच्चा स्नेह है ईश्वर का, जिसे प्राप्त करके मनुष्य सबकुछ प्राप्त कर लेता है। शिवबाबा कहते हैं, बच्चे, बीज को पानी दोगे तो सारे वृक्ष को मिल जाएगा। परमात्मा पिता हैं इस मनुष्य सृष्टि के बीज, उनसे प्रीत लगाकर हम सर्व प्राप्तियों के हकदार बन सकते हैं। ■■■

योगयुक्त या योगमुक्त जीवन?

■■■ ब्रह्माकुमार सूर्य, आबू पर्वत (राज.)

मानव जीवन सर्वाधिक मूल्यवान है। जो मनुष्य अपने जीवन के महत्व को समझता है, वो महान बन जाता है। मनुष्यों के अंदर भी वे मनुष्य परम श्रेष्ठ हैं जिन्होंने इस धरा पर अवतरित भगवान को पहचान कर अपने जीवन को पवित्र बनाया और दिव्यता के पथ पर चल पड़े। उनसे भी श्रेष्ठ वे हैं जिन्होंने अपना सर्वस्व विश्व की सेवा अर्थ प्रभु अर्पण कर दिया। परंतु उनसे भी श्रेष्ठ और अति बुद्धिमान वे हैं जिन्होंने अपना जीवन योगयुक्त बना लिया, जिन्होंने अपने एक-एक संकल्प व पल को महान बना लिया, जिन्होंने अपने जीवन के अधिकतम् क्षणों को, सर्व श्वासों को योगयुक्त होकर परम आनंद में व्यतीत किया, जो मनजीत और कर्मेन्द्रियजीत बन गए।

अप्राप्ति, असंतोष, पश्चाताप

परंतु, वे मनुष्यात्माएँ जिन्होंने भगवान को पहचान कर और उसका ज्ञान दूसरों को देकर भी स्वयं को योगमुक्त ही रखा, उनका जीवन साधारण बनकर रह गया। वे पवित्र भी हैं और अपना सर्वस्व कुर्बान भी कर चुके परंतु परमात्म-मिलन का सुख उनके भाग्य में ही नहीं है। उनसे सूक्ष्म विकर्म भी होते रहते हैं। वे परमात्म-प्यार के भी पात्र नहीं बन पाते। वे सर्व ईश्वरीय खजानों से भी दूर रह जाते हैं और परिणाम होता है अप्राप्ति, असंतोष और पश्चाताप।

जितना चाहो, भाग्य बना लो

भगवान को पाकर, उनके सानिध्य की अनुभूति करके, उनके सम्पूर्ण ज्ञान के अधिकारी बनकर और दिव्य बुद्धि को प्राप्त करके हमें सोचना चाहिए कि भगवान जब सब कुछ देने आया है तो क्यों ना हम उससे सर्वस्व प्राप्त कर लें। भक्ति में हम जिससे थोड़ा-थोड़ा माँगते आये, वो स्वयं हम पर अपना सर्वस्व कुर्बान करने को तैयार है। उसे अपने सामने देखें। वे कह रहे हैं कि बच्चे, मुझसे जो चाहो, ले लो। जन्म-जन्म का जितना महान भाग्य बनाना चाहो, बना लो। चाहे स्वर्ग की बादशाही ले लो, चाहे मनइच्छित वरदान। चाहे तो मुक्त अवस्था को प्राप्त हो जाओ और चाहो तो सर्व शक्तियों के स्वामी बन जाओ।

इच्छाओं पर हो जाए हमारा राज्य

हम चिंतन करें कि क्या हमारे इस ईश्वरीय जीवन का कुछ महान लक्ष्य है? अपने लक्ष्य को इतना महान बना लो कि व्यर्थ के लिए समय ही ना बचे। माया हमसे दूर चली जाए। सांसारिक इच्छाओं पर हमारा राज्य हो जाए। संसार के सभी रस हमें फीके लगने लगें। सोना भी मिट्टी समान प्रतीत होने लगे। एकांत में बैठकर स्वयं से बातें करें कि पूरे कल्प में केवल एक बार ये स्वर्णिम अवसर मिलता है – भगवान से, परम सद्गुरु से, दाता व विधाता से सर्वस्व प्राप्त करने का। यदि ये स्वर्णिम अवसर हमने जाने दिया तो द्वापर से पुन: हम भगवान के आगे हाथ ही फैलाते दिखाई देंगे। असंतोष हमारे अंतर्मन में समा गया होगा। चाहते हुए भी प्राप्तियाँ नहीं कर पायेंगे। बार-बार असफलता और हार का कड़वा स्वाद चखना पड़ेगा। तो क्यों ना हम स्वयं को व्यर्थ से मुक्त करके योगयुक्त हो जाएँ। स्वयं से बातें करें कि भगवान के पास आए थे किसलिए और कर क्या रहे हैं?

कर्मेन्द्रियों के रसों से बाहर आ जाएँ

हजारों वर्षों से देहभान में लिप्त हुई आत्मा ईश्वरीय रसों से दूर रहने के कारण कर्मेन्द्रियों के रसों में लिप्त होती गयी। संसार के अनेक मनुष्य और अनेक ज्ञानीजन भी कर्मेन्द्रियों के गुलाम हो गए परंतु यदि ये सांसारिक रस अपनी ओर खींचते रहे तो मन एकाग्र नहीं रह पाएगा, मन-बुद्धि भटकते रहेंगे और हम योगयुक्त होने के बजाए

योगमुक्त हो जाएँगे। स्वयं को चेक कर लें, स्वादेन्द्रिय का रस हमें रोगों का शिकार तो नहीं बना रहा है? जिसने स्वादेन्द्रिय को जीत लिया हो, वही सच्चा योगी है। आँखों का रस हमारे मन को भटका तो नहीं रहा है? कनरस हमें निंदारस में तो नहीं घसीट रहा है? व्यर्थ बोल बोलकर हम अपनी आंतरिक शक्तियों को नष्ट तो नहीं कर रहे हैं? यदि ऐसा है तो हम योगमुक्त ही रह जाएँगे।

सांसारिक इच्छाओं से उपराम

संसार में बढ़ता हुआ माया का प्रलोभन अनेक ज्ञानी और योगीजनों को भी अपनी चपेट में ले रहा है और वे इसे ही प्राप्ति और सच्चा सुख मानकर इसके चक्रव्यूह में उलझते जा रहे हैं। हमारी युवा पीढ़ी को तो हमारी महान भारतीय संस्कृति का एहसास भी नहीं रहा है। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव ने उन्हें काम की अग्नि में झोंक दिया है। काम-तृप्ति ही जीवन का लक्ष्य बन गया है। काम ही सब कुछ है, इस अधम विचार ने उनको पतन की राह पर दौड़ा दिया है । वे कामुकता को ही जीवन की सफलता मान बैठे हैं। सांसारिक इच्छाओं और विकारों के पीछे दौड़ता बुद्धिमान मनुष्य, जीवन के सच्चे सुखों से दूर होता जा रहा है। व्यसन उसे घेर रहे हैं। मानसिक रोगों का फंदा उन्हें नष्ट करने पर उतारु है। उन्हें यह भूल गया है कि अध्यात्म मनुष्य जीवन की नींव है। उसके बिना तो भौतिकता की इमारत आधारहीन है, जो कभी भी गिर सकती है। इसलिए अब समय की सूक्ष्मता को पहचान कर, सांसारिक इच्छाओं और मनोविकारों की इच्छाओं को कम करते चलें तो आपकी श्रेष्ठ इच्छाएँ पूर्ण हो जाएँगी। अगर बहुत इच्छाएँ होंगी तो जीवन योगयुक्त नहीं। योगमुक्त जीवन मृगतृष्णा के समान बन जाएगा और विकारों की अग्नि जलाकर भस्म कर देगी।

इलेक्ट्रॉनिक साधनों की ओर झुकाव

नि:संदेह इलेक्ट्रॉनिक साधन मनुष्य के लिए वरदान हैं परंतु जो मनुष्य वरदानों का दुरुपयोग करता है, उसके लिए वरदान भी श्राप बन जाते हैं। इनमें अच्छी सूचनाएँ भी होती हैं और मन को भटकाने वाले कुविचार भी। इनसे निकलने वाली बुरी तरंगें मस्तिष्क व शरीर पर बहुत बुरा प्रभाव डाल रही हैं। जो लोग इन पर लंबा समय व्यतीत करते हैं, उनके मन की स्पीड फास्ट हो जाती है। उनके मस्तिष्क की शक्ति क्षीण होती रहती है। एकाग्रता उनके लिए किसी अन्य जन्म की बात रह जाती है। पढ़ाई-लिखाई में वे अच्छे नहीं बन पाते। जिन माताओं ने अपने छोटे बच्चों के हाथ में मोबाइल थमा दिया है, समझ लें कि उन्होंने उनकी मौत का आह्वान कर लिया है क्योंकि इससे बच्चों के मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ता है। बच्चों का मस्तिष्क अत्यंत नाजुक होने के कारण सिकुड़ने लगता है। आप पायेंगे कि वे कुछ ही समय में चिड़चिड़ेपन के शिकार हो जाते हैं, परेशानी व अवसाद में आ जाते हैं। इसलिये इस वरदान को श्राप ना बनायें। इनका संयमित उपयोग ही करें। सत्य ज्ञान इन्टरनेट से नहीं, ज्ञान के सागर से प्राप्त होगा। जो ज्ञानीजन रात को देर तक इन साधनों का उपयोग करते हैं, वे कभी योगयुक्त नहीं हो पाते। वे देर से सोते हैं और देर से उठते हैं और उनका मन नकारात्मकता से भरपूर रहता है। उनके अंदर की वासनाएँ जागने लगती हैं और वो समय जल्दी ही आएगा कि वे सभी डिप्रेशन और मानसिक रोगों का शिकार हो जाएँगे। जो इन साधनों के साथ रात का समय व्यतीत कर रहे हैं, कुछ ही समय के बाद ये साधन उन्हें नींद के सुख से भी वंचित कर देंगे। इसलिये समझदार बनें, बुद्धिमान बनें और इन साधनों को वरदान ही रहने दें।

जीवन को, समय को और संकल्पों को महत्व दें

ब्रह्मावत्सों का जीवन अनमोल है। एक-एक संकल्प महान और एक-एक सेकण्ड बहुत मूल्यवान है। क्यों है ऐसा? क्योंकि ये पुरुषोत्तम संगमयुग का समय ऐसा मूल्यवान है कि हम इसमें सतयुग और त्रेतायुग के 2500

वर्षों के एक-एक दिन का भाग्य निर्माण कर रहे हैं। हमारा प्रति सेकण्ड और प्रत्येक संकल्प हमारे भावी पार्ट को निश्चित कर रहा है। इसलिये संकल्पों को महान बनायें और समय को सफल करें। जो मनुष्य समय को नष्ट करेंगे, समय के थपेड़े एक दिन अवश्य ही उन्हें समय के मूल्य का एहसास करायेंगे परंतु तब समय बीत गया होगा। जिन ज्ञानीजनों ने संकल्पों को महान नहीं बनाया, संकल्प ही उनको समस्याओं का अनुभव करायेंगे। तब वे अपने संकल्पों को रोक नहीं पायेंगे। संकल्पों की मार ही उनके लिए धर्मराजपुरी की सजा बन जाएगी। इसलिये अपने को, अपने त्याग को, अपनी समर्पणमयता को महत्व देकर अंतर्मुखी हो जाएँ और अपने जीवन को योगयुक्त बनाएँ। जो योगमुक्त रह जाएँगे, वे रोगयुक्त हो जाएँगे। उनका जीवन चिंताओं से युक्त हो जाएगा और वे खाली हाथ घर लौटेंगे। याद रहे, समय को महत्व देने वाले मनुष्य ही समय को नयी दिशा दे सकते हैं। वे समय की धारा को बदल सकते हैं। वे इस काल के भी राजा बन सकते हैं। परंतु व्यर्थ में समय बिताने वाले लोग श्रेष्ठ संकल्पों के खजानों से मुक्त रह जाते हैं। उनके मन में खालीपन बसता है। उनके मन की स्पीड बहुत फास्ट हो जाती है और वे जीवन का सच्चा सुख नहीं ले पाते।

मनोवैज्ञानिकों के सर्वे के अनुसार, प्रतिदिन किसी मनुष्य के मन में चालीस हजार, तो किसी के मन में पचास हजार, तो किसी के मन में तो साठ हजार संकल्प भी उठते हैं। उनके नींद का समय भी संकल्पों में बीतता है। इससे आंतरिक शक्तियाँ नष्ट होती रहती हैं। इससे मनुष्य सफलता से दूर, सुख, शांति से वंचित और भय का शिकार रहने लगता है। योगीजन यदि चाहें तो प्रतिदिन अपने संकल्पों को एक हजार से दस हजार तक सीमित कर सकते हैं। जिनके संकल्प एक दिन में एक हजार ही रह जाएँगे, वे महान योगी बनकर संसार के लिए वरदान बन जाएँगे परंतु जो योगमुक्त रह जाएंगे, उनके संकल्पों की स्पीड दिनों-दिन बढ़ती जाएगी और वे मानसिक रोगों की पीड़ाओं से अति कष्ट पायेंगे।

अमृतवेले परमात्म मिलन का सुख प्राप्त करें

नींद का सुख तो बहुतों को आकर्षित करता है परंतु आज अनेकों के भाग्य में नींद का सुख भी नहीं रहा। जो नींद को जीतने वाले बनकर अमृतवेले अपने परमपिता से बातें करते हैं, वे परम आनंद को प्राप्त होते हैं। जो निराकार आत्मा बनकर, निराकार परम सत्ता से योगयुक्त होते हैं, वे विकर्माजीत और कर्मातीत बनकर इस संसार में सबसे अधिक शक्तिशाली बन जाते हैं। जो योगीजन ब्रह्ममुहूर्त में ज्ञानसूर्य से प्रकाश प्राप्त करते हैं, वे संसार के तिमिर को हरने वाले बन जाते हैं। जो सवेरे-सवेरे स्मृति स्वरूप में स्थित होते हैं, स्वमानधारी बनते हैं, उनकी स्थिति महान हो जाती है। यदि ब्रह्ममुहूर्त में हम अशरीरीपन में स्थित होते हैं तो विश्व को शांति का दान मिलता है और यदि स्वदर्शन चक्रधारी बनते हैं तो विश्व में सुखों व खुशियों के प्रकम्पन फैलते हैं। ये समय भाग्य बनाने की वेला है। इस समय में परम सद्गुरु खुले मन से वरदान और शक्तियाँ बाँटते हैं। इसी समय वे अपना निर्मल प्यार और आशीर्वाद देते हैं। हमारे सिर पर हाथ रखते हैं। जो ज्ञानीजन इस समय को नींद में बिताते हैं, वे इन सभी प्राप्तियों से वंचित रह जाते हैं।

रोज अमृतवेले एक बार परमात्म प्रेम से अपने को भरपूर कर लें। इसके लिए, उनसे मुझे क्या-क्या प्राप्तियाँ हुई, उन्हें याद कर सच्चे मन से उन्हें शुक्रिया अदा करें, उनसे बातें करें। हम क्या थे और आपने हमें क्या बना दिया। आपने हमें दिव्य बुद्धि प्रदान की, जीने का मार्ग दिखाया। इस अंतिम जन्म में आप हमारे साथी बन गए, आपने हमारे सारे बोझ हर लिए, आपको पाकर हम बहुत सुखी हो गए। शुक्रिया करें अपने परम सद्गुरु का, सर्वशक्तिवान का। उनका जिन्होंने आकर हमें सुखदायी जीवन प्रदान किया है। उठते ही अपने को फरिश्ते स्वरूप में स्थित करें तो शिव बाबा और ब्रह्मा बाबा का प्यार प्राप्त होगा और वे हमारी छत्रछाया बन जाएँगे। योगयुक्त होने के लिए सवेरे 4 से 8 बजे तक के समय को योग में , सुंदर चिंतन में, ज्ञान श्रवण में और स्वयं को स्वमान में स्थित

करते हुए व्यतीत करें।

महान कर्त्तव्य तुम्हें बुला रहे हैं

भगवान के ये महावाक्य 'समय तुम्हारा इंतजार कर रहा है' उन महान योगियों के लिए महान प्रेरणा है जिनका जन्म विश्व कल्याण के लिए हुआ है। ऐसा समय आ रहा है, जब ये वसुंधरा धर्मराजपुरी का रूप ले लेगी। जब मानसिक व शारीरिक रोगों की सुनामी मनुष्यों को सुखों से वंचित करने लगेगी। जिन्होंने पापकर्मों का आनंद लिया है, वे सजाओं की पीड़ा पाएँगे। जिन्होंने मुर्गों को मुर्दा बनाया है, उन्हें अंत में उतनी ही पीड़ा होगी जितनी जीवन भर मुर्गों ने पीड़ा प्राप्त की। प्रकृति कुपित हो जाएगी और सबकुछ अपने आगोश में समाने लगेगी। पाँचों तत्व मिलकर इस संसार में विनाश का तांडव नृत्य करेंगे। मोह मनुष्य को अति पीड़ा पहुँचायेगा। वासनाओं में जलती हुई आत्माएँ पश्चाताप की अग्नि में जलने लगेंगी। मौत का खेल चलेगा। संसार के अनेकानेक लोग रात को सो नहीं पायेंगे।

ऐसे समय में श्रेष्ठ योगीजन अपनी पवित्र दृष्टि से वायब्रेशन फैलाकर अनेकों को रोगमुक्त करेंगे। अपनी शांति की तरंगें फैलाकर अशांति की अग्नि में जल रही आत्माओं के चित्त को शीतल करेंगे। भय से पीड़ित मनुष्यों को, दु:खों से दहलते दिलों को, शक्तियों के प्रकम्पन देकर उन्हें जीने का एहसास करायेंगे। महान योगी दूसरों को मुक्ति का वरदान देंगे। वे ही दु:खहर्त्ता, मास्टर भाग्यविधाता बन जाएँगे। परंतु, जिन्होंने योगमुक्त जीवन बिताया है, वे पश्चाताप करते हुए, खाली हाथ इस संसार से विदाई लेंगे।

भगवानुवाच है, 'विजयमाला में अंत तक भी कुछ सीटें खाली रखी जाती हैं।' इसलिये ज्ञान-योग के मार्ग पर अंत में आने वाले भी महान तपस्वी और पवित्र आत्मा बनकर सीट को प्राप्त कर सकते हैं। अत: जिन्हें महान लक्ष्य को प्राप्त करना है, वे जीवन को योगयुक्त, संसार से निर्लिप्त, अत्यंत शक्तिशाली बनाएँ और सभी के दु:खहर्त्ता बनें। वे स्मृति स्वरूप और स्वमानधारी बनें। अशरीरी स्थिति और आत्मिक दृष्टि का अभ्यास करें। प्रतिदिन कर्मक्षेत्र पर रहते हुए, सारा दिन किसी एक श्रेष्ठ स्मृति का अभ्यास करें तो जीवन स्वत: योगयुक्त हो जाएगा। बात केवल लगन लगाने की है। मार्ग तो अति सरल है। प्रतिदिन एकांत में भी रमण करें। स्वयं के श्रेष्ठ पुरुषार्थ के लिए, स्वयं को समय दें तो थोड़े समय में भी श्रेष्ठ स्थिति को प्राप्त कर लेंगे। याद रहे, आने वाला समय योगियों का होगा। ये समय उनका होगा जिन्होंने स्वयं को सर्व खजानों से भरपूर किया है। योगमुक्त आत्मायें तो देखती ही रह जाएँगी। ■■■

शिव से ध्यान लगाओ

ब्रह्माकुमार राजेन्द्र सिंह, एटा (उ.प्र.)

मेरे भाई-बहनो, शिव से ध्यान लगाओ।
शिव ज्योतिर्बिन्दु निराकार को राजयोग से पाओ।।
मेरे भाई-बहनो.....

ज्योतिर्मय जीवन की खातिर त्याग-तपस्या होती है।
छल, प्रपंच, धोखेबाजी – यह बीज पाप के बोती है।
द्वैतभाव से सहनशीलता खड़ी अकेली रोती है।
दुराचार से कुण्ठित होती ज्ञान-नयन की ज्योति है।
पावन, प्रखर, श्रेष्ठ प्रेम का पुनि-पुनि दीया जलाओ।
मेरे भाई-बहनो.....

पावन हो कथनी और करनी, पावन दृष्टि-वृत्ति हो।
द्वेषभाव, छल, छद्म भावना मन में ना एक रत्ती हो।
लिप्सा, आकर्षण, दुनिया के किसी में ना आसक्ति हो।
जो माया की चादर झिलमिल उससे हमें विरक्ति हो।
मधुर बहे रसधारा अब तो ऐसा बिगुल बजाओ।
मेरे भाई-बहनो.....

नाम बनाएँ, बिगाड़ें नहीं

■■■ ब्रह्माकुमार रूपलाल,
होशियारपुर (पंजाब)

एक गरीब आदमी हर रोज गैस वाले गुब्बारे के साथ भगवान को पत्र भेजता था और एक ही बात लिखता था कि भगवान, मैं बहुत गरीब हूँ, कृपया मुझे एक लाख रुपये भेजो ताकि मैं अपनी आवश्यकताएँ पूरी कर सकूँ। विधि की लीला देखिए, वह पत्र हर रोज एक पुलिस थाने में गिरता। पुलिस का सारा स्टाफ उसे पढ़कर एक जगह रख देता। जब यह सिलसिला 15-20 दिन तक चलता रहा तो पुलिस वालों ने आपस में सलाह-मशविरा करके अपनी-अपनी तनख्वाह में से अपनी योग्यता अनुसार पैसे निकाल लिए और 50 हजार रुपए इकट्ठे हो गए। यह सोच कर कि इस आदमी की आस्था भगवान में बनी रहे, सभी पुलिस वाले इकट्ठे हो कर 50 हजार रुपये देने उसके घर गए। उस आदमी को पुलिस वालों ने कहा कि भगवान ने आपकी सुन ली है और आपके लिए ये 50 हजार रुपए भेजे हैं। पैसे हाथ में पकड़कर, ऊपर की तरफ मुँह करके वह आदमी भगवान से कहने लगा, भगवान जी, मैंने तो आपसे एक लाख मांगे थे। आपने पैसे भेजे भी परन्तु मेरे को केवल 50 हजार ही मिले हैं, मुझे पूरा विश्वास है कि आपने तो एक लाख ही भेजे होंगे जिनमें से 50 हजार पुलिस वालों ने ही रख लिए।

यह सुनकर सब पुलिस वाले उसका मुँह ताकते रह गए कि हमने क्या सोचा था और यह आदमी तो हमारा शुक्रगुजार होने की बजाए हमारे ऊपर ही शक कर रहा है। ऐसा क्यों हुआ? कारण यह है कि कोई व्यक्ति, परिवार, संगठन या संस्था लंबे समय से बार-बार जिस कार्य को किए जा रहा हो तो उसकी एक इमेज बन जाती है। यदि वह कभी, बनी हुई इमेज के विपरीत अच्छा या बुरा काम कर भी दे तो कोई उस पर विश्वास नहीं करता। उपरोक्त घटना में भी इमेज का प्रभाव बताया गया है। शिवबाबा हम बच्चों को प्रतिदिन शिक्षा देते हैं कि बच्चे, हर कर्म करने से पहले सोचो। अपने बोल पर ध्यान दो। बोलने से पहले तोलो। जैसे सफेद कपड़े पर धब्बा ना लगे इसलिए उसे बचाकर रखते हैं, ऐसे ही हमारे कर्मों द्वारा बाबा के विश्व-परिवर्तन के कार्य में कोई रुकावट न आए, ऐसा ध्यान रखना है। जैसे किसी राजा के बच्चे को नशा रहता है कि मैं राजकुमार हूँ और मुझे अपने कर्मों से राजा की शान बढ़ानी है, ऐसे ही हमें भी नशा रहे कि हम सर्वोच्च सत्ता के बच्चे हैं, हमें अपने कर्मों से अपने परमपिता के गुणों को प्रत्यक्ष करना है।

कुछ समय पहले मैं और मेरा पड़ोसी पंजाब से हरिद्वार जा रहे थे। जैसे ही हम यमुनानगर (हरियाणा की सीमा) पर पहुँचे तो दूसरे स्टेट की गाड़ी देखकर पुलिस वाले ने मुझे गाड़ी से नीचे उतारा और तलाशी लेने लगा। मैंने कहा, भाई साहब, हम ब्रह्माकुमारी आश्रम में जाते हैं। लहसुन-प्याज तक तो खाते नहीं हैं और आप मेरे से नशे का सामान ढूंढ़ रहे हो। जैसे ही मेरे मुख से यह वाक्य निकला, पुलिस वाले को जैसे झटका लगा। वह एकदम पीछे हटा और हमें जाने को कहा। यह भी ब्रह्माकुमारी संस्था की 83 सालों से बनी इमेज का ही प्रभाव था। कहा जाता है, नाम बनाने में सारी आयु लग जाती है और नाम बदनाम करने में केवल एक गलत कर्म ही काफी है। अत: हम सभी भाई-बहनें अपने कर्मों पर इतना ध्यान दें कि हमारी वजह से संस्था की सफेद इमेज की सफेदी और अधिक बढ़ती जाए। ■■■

मन की गुफा में आत्मरस का अनुभव करो

■■■ ब्रह्माकुमारी प्रभा, पीतमपुरा, शक्तिनगर (दिल्ली)

ब्रह्माकुमारी प्रभा बहन, पीतमपुरा सेवाकेन्द्र (शक्तिनगर, दिल्ली) की निमित्त संचालिका हैं। आपने भ्राता जगदीश चन्द्र जी के साथ 18 सालों तक शक्तिनगर सेवाकेन्द्र में रहकर ईश्वरीय सेवाएँ की और बहुत कुछ सीखने का सुअवसर प्राप्त किया। प्रस्तुत कर रही हैं आप भ्राता जी के महान प्रेरणादायी जीवन के संस्मरण – सम्पादक

भाई साहब कहते थे, "ईश्वरीय ज्ञान को समझने के लिये आध्यात्मिक बुद्धि चाहिए। आध्यात्मिक बुद्धि से मन की स्थिति एकरस बनी रहेगी और हम निन्दा-स्तुति, घृणा-द्वेष, हानि-लाभ, जय-पराजय, विघ्नों-तूफानों में रहते हुए भी निर्णय ठीक कर सकेंगे। इसके लिए ज्ञान की देवी, हंसवाहिनी, वीणावादिनी बनो। हंस मोती चुगता है, कंकर-पत्थर छोड़ देता है। मैं अनेकों से मिलता हूँ, बातचीत करता हूँ परन्तु रात्रि को, बाबा को चार्ट देकर हल्का होकर ही आराम करता हूँ। गीत है, 'मैली चादर ओढ़ के कैसे द्वार तेरे मैं आऊँ।' अत: मन-बुद्धि को स्वच्छ रखो। किसी के संग का उल्टा रंग हमारे ऊपर न लगे।" ट्रेन में भी (जब भाई साहब के साथ मुजफ्फरनगर, चण्डीगढ़, हरिद्वार आदि स्थानों पर सेवार्थ जाना होता था तो ज्ञानामृत, प्यूरिटी पेपर आदि साथ लेकर जाती थी) उनके साथ ज्ञान-योग के अनुभवों की लेन-देन होती थी, यात्रियों को भी संस्था की सेवाओं के बारे में वे बताते थे।

बाबा के पास बैठो

भाई साहब कछुए का उदाहरण देकर कहते थे कि इतनी तो उसमें भी अक्ल है कि कब कर्मेन्द्रियों का प्रयोग करना है और कब समेट लेना है। हमें भी अपने विचारों को, कर्मों को समेटना है, मन की गुफा में मग्न हो जाओ, आत्मरस, प्रभुरस का अनुभव करो। कई बार कपड़े धुलाई के बाद मैं सोफा-रूम में 10 मिनट के लिए पसीना सुखा रही होती थी तब वहाँ अचानक आते और यही समझाते कि बाबा के कमरे में भी पंखा लगा हुआ है, बाबा के पास बैठो, बाबा को ही देखो। जैसे लौकिक में एक बच्चा यदि अपने पिता को ही देखता रहता है तो पिता थोड़ी देर में अवश्य पूछते हैं कि क्या चाहिए?

गम्भीरता से ज्ञान-योग का अध्ययन करो

भाई साहब कहते थे, "मैं तो 1952 से ज्ञान में हूँ, गुलजार बहन 1937 से ज्ञान में हैं, फलानी बहन 1962 से आई हैं। यदि रोज बाबा को चार घण्टे दिल से याद किया तो चार को 365 दिन से गुणा करो तो 1460 घण्टे एक साल में हमने योग किया। पिछले 30 सालों से मैं सम्पूर्ण समय बाबा को दे चुका हूँ। आप अभी (1982 में) आई हो, मैंने 30 सालों में कितना पुण्य जमा किया, कितने पाप मेरे दग्ध हो गये, आप लोग गम्भीर हो जाओ, ज्ञान, योग का अध्ययन करो, एकान्तवासी बनकर, अन्तर्मुखता की गुफा में बैठो, बाह्यमुखी नहीं बनो, शमा पर फिदा हो जाओ। चकोर चाँद को देखकर ऊपर (उसी) की ओर उड़ता है, आपका मन भी भगवान (बाबा) की तरफ उड़कर जाये, समय न लगे।"

सादगी और त्याग भावना

भाई साहब कहते थे, "लौकिक कामनाएँ, इच्छाएँ नहीं होनी चाहियें।" वे जहाँ भी जाते थे, उन्हें सौगात रूप में कहीं से घड़ी, चेन, अंगूठी, बैज आदि मिलते थे, हम रख देते थे। शरीर छोड़ने के पाँच साल पहले जब उन्हें एहसास हुआ कि अब मुझे मधुबन जाना है तो अलमारी में से थोड़ा-बहुत सामान जो रखा था, सब बाहर निकलवा

लिया, अपनी सफेद ड्रेस भी और कहा, मुझे मधुबन में इतनी ड्रेस ही चाहियें, वही अटैची में डालें, बाकी सब यहाँ के भाइयों को दे दें। भाई साहब जरूरत से अधिक कपड़े, चप्पल आदि नहीं रखते थे, सादगी थी, त्याग भावना थी। थोड़ा भी जो उन्हें अधिक लग रहा था, वह चक्रधारी दीदी के कमरे में भिजवा दिया।

संगठन का महत्त्व

भाई साहब रोज रात को नौ बजे से दस बजे तक क्लास जरूर कराते थे। गुलजार दादी, इशू दादी, सन्तरी दादी, मनोहरइन्द्रा दादी, बड़ी दादी आदि के बहुत उदाहरण देते थे। ये सभी शक्तिनगर में आती रहती थी। उनकी विशेषताएँ बताते थे, उनके प्रति हमारे मन में सम्मान बढ़ाते थे तथा कहते थे कि दादियों जैसे बनो। भाई साहब कहते थे, "आप सारी दुनिया के पहले सेवाकेन्द्र (कमला नगर, शक्ति नगर) में बैठे हो। नींव का मजबूत होना बहुत जरूरी है। आपकी कमी सारे पेड़ को कमजोर करेगी, आपकी मजबूती से सबमें मजबूती आयेगी।" भाई साहब दिनचर्या में बहुत सावधान रहते थे और सभी को सावधान रखते थे। उनकी दिनचर्या प्रात: ढाई बजे से शुरू हो जाती थी। मुझे भी उनके साथ साहित्य लिखने में पूरी मदद देनी होती थी। मैं भी नियमित पाँच पेन लेकर 3.30 बजे उनके कमरे में पहुँच जाती थी। जब लिखने का कार्य ज्यादा होता था तो अमृतवेले योग के लिए हम तीन बहनों को (सुधा बहन, सन्तोष बहन, प्रभा बहन) को क्लास रूम में नहीं जाने देते थे। मुझे याद है कि हमने रोज की मुरली स्पीकर से ही सुनी होगी क्योंकि सन् 1985 के आसपास, विदेश में भी सेवाकेन्द्र खुल रहे थे। ओम शान्ति भवन में सन् 1983 में शान्ति सम्मेलन, धर्म सम्मेलन, राजाओं-महाराजाओं का कार्यक्रम हुआ, बहुत ही व्यस्त दिनचर्या थी और दिल्ली में भी हर साल एक बड़ा कार्यक्रम होता ही था। कभी इंदिरा गांधी स्टेडियम में, कभी नेहरू स्टेडियम में, कभी तालकटोरा स्टेडियम में, कभी विज्ञान भवन में। भाई साहब हर कार्य युक्तियुक्त करते थे और सभी से करवाते भी थे। सुबह छह बजे सभागार मिलता था तो हम प्रात: 5.30 बजे, भाई साहब के साथ स्टेज का सारा सामान लेकर पहुँच जाते थे। भाई साहब जहाँ खड़े हो जाते थे, सभी भाग-भाग कर सेवा करते थे, कहना नहीं पड़ता था। अन्य सेवाकेन्द्रों से भी भाई-बहनें पहुँच जाते थे, जिनकी ड्यूटीज होती थीं। भाई साहब संगठन का महत्व बताते थे। वे कहते थे, बड़ों के प्रति सेवाभाव सभी में होना चाहिये, आप किसका कार्य कर रहे हो, कौन आपको कह रहा है (शिवबाबा), बुद्धि सबकी बाबा से ही लगवाते थे। नम्रता से, हाथ जोड़कर हरेक मेहमान से बात करते थे। चाहे डॉक्टर आते, चाहे इन्जीनियर, चाहे व्यापारी। मुझे कहा जाता था कि 25 मिनट के बाद यह टोली मेरे पास ले आना। समय के पाबन्द थे, अधिक समय किसी के पास नहीं बैठते थे।

विदेह अवस्था

राजा जनक के समान विदेही अवस्था में ही रहते थे। कुशलतापूर्वक सब कर्म भी करते थे, खुशी, उत्साह, सेवाभाव उन ज्ञानी तू आत्मा में हर समय दिखाई देता था। प्रात: 3.30 बजे से लिखने की सेवा, टाइप करने की सेवा, करेक्शन, एडिशन सब चल रहा होता था ताकि पहली पोस्ट से, पोस्ट ऑफिस से सारे कागज निकल जायें। नाश्ते के लिए 10 मिनट का समय मिलता था और फिर 12 बजे का रिकार्ड बज जाता था, भाई साहब लगातार जबानी बोल रहे होते थे और हम लिख रहे होते थे। आज वे सारे लेख हम ज्ञानसुधा (1,2,3,4 भाग) में पढ़ते हैं।

बहनों के प्रति बहुत सम्मान

दूसरों के दुख दूर करने के लिए और स्वयं सम्पूर्णता तक पहुँचने के लिए उनकी वृत्ति में ही त्याग भावना थी। उनकी ट्रेन टिकेट भी स्लीपर क्लास की होती थी। ए.सी.की टिकेट तो काफी समय के बाद शुरू हुई। एक बार स्लीपर में भी बेडिंग बिछाकर नीचे भी लेट गए थे क्योंकि मेरी टिकेट कन्फर्म नहीं थी। मुझे कहा, पाँच घण्टे स्लीपर पर तुम सो जाओ फिर बाद में मैं सोऊँगा। हम मना भी करते थे परन्तु बहनों के प्रति उनके मन में सम्मान बहुत था। ■■■

भगवान की पहचान

■■■ ब्रह्माकुमार शैलेश, महारानीपेठ, विशाखापट्टनम

जब मैं छोटा बच्चा था, मेरी माताजी कहा करती थी कि भगवान गुप्त वेश में आते हैं। इसलिए मैं आने वाले सभी साधू, फकीर, भिखारी आदि को, कहीं यह भगवान तो नहीं है, यह समझ पैसे दे देता था। उस समय मुझमें भगवान को पहचानने की बुद्धि नहीं थी। ब्रह्माकुमारीज में आने के बाद मुझे यह बुद्धि मिली कि भगवान के गुप्त वेश में आने का अर्थ क्या है। आज अपने को भगवान या भगवान के अवतार बताने वाले बहुत लोग हैं। तो भगवान को कैसे पहचानें? भगवान की पहचान उनकी महिमा से होती है। उनकी महिमा का कुछ उल्लेख यहाँ कर रहा हूँ –

वे ज्ञान के सागर, सर्व के रक्षक, सर्वशक्तिवान, पतित-पावन और दुखहर्ता, सुखकर्ता हैं।

ज्ञान के सागर

भगवान को सृष्टि का रचयिता सब मानते हैं। तो भगवान जरूर रचता और रचना का अर्थात् सृष्टि के आदि, मध्य, अन्त का ज्ञान देगा, पाप और पुण्य का ज्ञान देगा, आत्मा के उत्थान और पतन का ज्ञान देगा, मुक्ति और जीवनमुक्ति का ज्ञान देगा। भगवान पतित से पावन बनने की विधि अर्थात् अपने से योग लगाना सिखायेगा। ब्रह्माकुमारीज में आने के बाद मुझे भगवान के ज्योतिस्वरूप का परिचय मिला और उनसे योग लगाने की विधि की सीख मिली। इस ज्ञान को प्राप्त करने से पहले मुझे बहुत जल्दी क्रोध आ जाता था। परन्तु जैसे ही मैंने योग लगाना शुरू किया, थोड़े ही दिनों में लगने लगा कि क्रोध की पकड़ ढीली हो रही है। सवेरे 3.30 बजे ऐसे लगने लगा जैसे कोई मेरे पैरों के पास खड़ा है और मेरी ओढ़ी हुई चादर को खींच रहा है। मैं जितना जोर से खींचूँ, वो और जोर से खींचे और मुझसे कहे, यह सोने का वक्त नहीं है, योग करो। जब तक मैं उठ के ना बैठूँ, वो मुझे न छोड़े। भगवान की मुरलियों के द्वारा मुझे ऊपर लिखी सभी बातों की समझ मिल गयी।

सर्व का रक्षक

ज्ञान न होने के कारण मैं भगवान से जीवन की रक्षा की प्रार्थना करता था। शायद सभी यही करते हैं परन्तु जब जान को खतरा होता है तब हर व्यक्ति रक्षा के लिए पुलिस के पास जाता है। अपने आप को शरीर समझने के कारण, हम पुलिस को जान का रक्षक समझ लेते हैं। वास्तव में आत्मा को काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार के भूतों से रक्षा चाहिए। ये वे भूत हैं जिनके प्रभाव में आकर आत्मा पाप करती है और परिणामस्वरूप दुख भोगती है। आत्मा का पतन इन भूतों के कारण होता है और इस कारण आत्मा, परमात्मा से रक्षा की प्रार्थना करती है।

सर्वशक्तिवान

टी.वी.धारावाहिक या पिक्चर में शक्तिमान उसे दिखाते हैं जो बुराई का नाश करे। निराकार परमात्मा के द्वारा काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार रूपी बुराइयों से सारे संसार को आजादी मिलती है। परमात्मा इस धरा पर अवतरित हो आत्माओं को इन भूतों से लड़ने की शक्ति प्रदान करते हैं। इतना ही नहीं, परमात्मा से प्राप्त शक्तियों से आत्मा अपने दिव्य संस्कारों को पुनः धारण करती है इसलिए वे सर्वशक्तिवान हैं।

पतित-पावन

पतित पावन परमात्मा जन्म और मरण के चक्र में नहीं आते इसलिए सदा पावन हैं। वे पवित्रता के सागर हैं। उनमें ही सर्व आत्माओं को पावन बनाने की ताकत है। उन्हें किस विधि से याद करने से आत्मा पावन बनती है, वे स्वयं समझाते हैं। आत्मा पावन बन रही है, यह आत्मा

के विचारों में आए परिवर्तन से पता चलता है। आत्मा जितनी पावन बनती जायेगी, उसके विचार उतने ही सकारात्मक, सुखदाई, पवित्र और शीतल होते जायेंगे। व्यक्ति के चेहरे पर प्रसन्नता और सन्तुष्टता होगी।

दुखहर्ता, सुखकर्ता

मनुष्य अज्ञानता-वश अपने दुखों का कारण भगवान को बताते हैं और फिर उन ही से सुख की कामना रखते हैं। वे दुखों से छूटने की इच्छा से भगवान की बंदगी करते हैं और कहते हैं, हे प्रभु, मेरी सुध लीजिए, मेरे कष्ट हरिए। वास्तविकता यह है कि हमारे दुखों का कारण हम स्वयं हैं। हमारे वे कर्म, जो देह अभिमान या काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के वश दूसरों को दुख पहुँचाते हैं, हमारे लिए दुखों का रास्ता खोलते हैं। भगवान की श्रीमत ही हमें श्रेष्ठ कर्म करना सिखाती है, जिससे हमारे सभी कर्म दूसरों को सुख देने वाले बन जाते हैं और हम दुखों से मुक्त हो जाते हैं। परमात्मा की इस महिमा से सिद्ध होता है कि वे सर्वव्यापी नहीं हैं। ■■■

मैं भी हनुमान

■■■ **ब्रह्माकुमार महेन्द्र, नालासोपारा (महाराष्ट्र)**

परोपकार परमात्मा का अनोखा गुण है जिसे हनुमान ने अपने समग्र जीवन में अपनाया। हनुमान के जैसा प्रभु का दीवाना शायद ही कोई और होगा। परमात्म ज्ञान ने हमें भी, छोटा ही सही लेकिन हनुमान बनने का सौभाग्य दिया है और परोपकार से प्राप्त आनंद अमृत का पान कराया है। मैं पिछले दस सालों से ब्रह्माकुमारीज का विद्यार्थी हूँ। मुंबई में नालासोपारा शहर की एक व्यस्त सड़क से सटकर मेरी दुकान है। तकरीबन रोज ही इस सड़क पर छोटी-बड़ी दुर्घटनाएँ होती रहती थी। इस कारण रोज परमात्मा पिता के सम्मुख संकल्प करता था कि बाबा, इस जगह ऐसा क्या है, जो रोज इतनी दुर्घटनाएँ होती हैं? अपनी और से कई बार नगर निगम को स्पीड ब्रेकर लगाने की विनती की परन्तु उनके मुताबिक यह कार्य उनके दायरे में नहीं आता था। मैं अपने को थोड़ा हताश-सा महसूस कर रहा था कि आखिर कब तक ये दुर्घटनाएँ होती रहेंगी। सोचता रहता था कि क्या करें जो यह रुकें।

एक दिन मेरे संकल्पों की पुकार जैसे कि सबसे बड़े परोपकारी ने सुन ली। हमारे सेवाकेन्द्र पर सड़क सुरक्षा संबंधित मेडिटेशन का प्रयोग कराया गया। मैंने रोज पूरी लगन से इस मेडिटेशन का प्रयोग करना शुरू किया। सर्वशक्तिवान परमात्मा से शक्ति लेकर सकारात्मक वायब्रेशन दुर्घटनाग्रस्त सड़क पर विशेष रूप से फैलाए और दुर्घटनामुक्त सड़क हो जाने की शुभकामना का सकाश देता रहा। इस प्रयोग को मैंने एक माह तक नियमित रूप से निभाया।

प्रयोग के बाद आज तक मेरी दुकान के सामने वाली सड़क पर एक भी दुर्घटना नहीं हुई है। आज मेरे दिल को बहुत ही सुकून का अहसास हो रहा है और दिल से पिता परमात्मा का शुक्रिया अदा करता हूँ कि 'वाह बाबा वाह' सबकुछ आप ही करते हो लेकिन माध्यम हम बच्चों को बनाते हो। परमात्मा राम की सेना का मैं भी एक हनुमान हूँ, सोच-सोच कर सीना फूलता रहता है और मुस्कान चेहरे से उतरती नहीं है।

मेरे प्यारे, मीठे बाबा, तहे दिल से आपका अनगिनत शुक्रिया। ■■■

पति-परमेश्वर नहीं

■■■ ब्रह्माकुमार श्रीगोपाल, चन्दा टॉवर्स नाटी इमली, वाराणसी

लौकिक जीवन में या भक्ति मार्ग में पति को भगवान का दर्जा दे दिया गया है। शादी के बाद नारी को कहते हैं कि अब यही तुम्हारा सबकुछ है, परमेश्वर है, इनकी ही पूजा करो। चाहे वो सभी विकारों से युक्त क्यों न हो, फिर भी नारी के लिए वो भगवान है। यह कितनी बड़ी अज्ञानता एवं सरासर ग़लत धारणा है। जब हम ईश्वरीय विश्व विद्यालय से जुड़े तो हमें बताया गया कि कोई देहधारी कभी भी भगवान नहीं हो सकता। परमेश्वर तो केवल एक है, जो पतियों का भी पति और सबका पिता है, वह है शिव परमात्मा, दूसरा कोई नहीं। मैंने अपने एक मित्र से पूछा कि पति को परमेश्वर का दर्जा क्यों दिया गया है? तो उसने बताया कि वह पत्नी का भरण-पोषण करता है, इसलिए भगवान है। सवाल यह है कि क्या मात्र भरण-पोषण करने से कोई भगवान बन जाता है? भरण-पोषण तो मनुष्य, मनुष्य का कर ही नहीं सकता। पोषण करने वाला तो केवल एक शिव परमात्मा है, उनके अलावा किसी अन्य में ऐसी हिम्मत है ही नहीं।

ज्यादा कमाने वाली पत्नी भगवान हो गई क्या?

कई जगह तो पत्नी, पति से ज़्यादा कमाती है तो क्या अब वह भगवान हो गई? यह सरासर अज्ञान एवं भूल है। पति और पत्नी को गृहस्थी की गाड़ी के दो पहिये कहा जाता है तो क्या एक पहिये का महत्व कम है? नहीं ना। बेटी पैदा होने पर कहते हैं कि लक्ष्मी जी आईं हैं तो क्या लक्ष्मी से दहेज लिया जाता है? क्या उसे दो नम्बर का नागरिक माना जाना चाहिए, बिल्कुल नहीं। मैं वर्षों से गृहस्थ जीवन में रहते हुए बाबा की छत्रछाया में अपना जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। अपनी युगल को छोटा जानकर मैं कोई कार्य नहीं करता। दासी नहीं बल्कि सच्ची साथी मानकर हर तरह का सहयोग करता हूँ और यह सब ईश्वरीय पढ़ाई की देन है।

पत्नी की सेवा करना पाप नहीं, पुण्य है

एक बार एक ग्लास पानी युगल को देने वास्ते मैं उठा तो बगल में बैठा व्यक्ति बोला, आप यह क्या पाप कर रहे हैं? मैंने कहा, भाई साहब, मुझे वो रोज पानी देती हैं, आज उनकी तबियत ठीक नहीं है, मैंने दे दिया तो क्या पाप हो गया? नहीं, यह तो पुण्य है। पत्नी से पैर दबवाना, प्रतिदिन इस भाव से कि तुम्हारा कल्याण होगा, एकदम ग़लत है। हाँ, छोटे-बड़े का लिहाज तो करना ही चाहिए। ब्रह्मा बाबा को लक्ष्मी जी का, नारायण के पैर दबाने वाला चित्र अच्छा नहीं लगा तो उन्होंने उस चित्र को बदलवा दिया। यही भाव हमारे अन्दर भी जागृत होने चाहिएँ। गृहस्थ जीवन में पवित्रता के साथ शिवबाबा को याद करते रहें तो यकीन मानिये, पूरा परिवार सुख से ओतप्रोत हो जायेगा, कभी भी कलह-क्लेश नहीं होगा। ■■■

हम लोगों से प्यार से बात करते हैं लेकिन कभी-कभी हमारी सोच उतनी प्यारी नहीं होती। रिश्ते बोल और व्यवहार से नहीं, हमारी सोच से बनते हैं। ध्यान से सोचिये...आपकी हर सोच उन तक पहुँच रही है

मन रूपी खेत में श्रेष्ठ विचारों की फसल

ब्रह्माकुमार सन्तोष राठौर, द्वारका, दिल्ली

किसी-किसी को अक्सर कहते सुना है कि मेरा तो भाग्य ही खराब है, मुझे तो कोई प्यार नहीं करता, लोग मेरी हर बात को गलत कहते हैं, सारे दुख मेरे ही भाग्य में हैं आदि-आदि। ये बातें मनुष्य सिर्फ कर्मों की गुह्य गति को ना समझने के कारण कहता है। कई बार समझ भी लेते हैं लेकिन धारणा करके स्वरूप नहीं बनते हैं। अपने दुखों, परेशानियों का जिम्मेवार औरों को ठहराकर, अलबेले होकर जीना पसन्द करते हैं। देखा जाये तो दुख को सही रूप में पहचानना ही सुख है। जो मनुष्य आत्मायें दुख में भी सुख ढूँढ़ लेती हैं, वे ही परिस्थितियों से पार जाकर अंगद और महावीर कहलाती हैं।

जैसे किसी व्यसन की आदत हो जाने पर मनुष्य को व्यसन के बिना रहना मुश्किल लगता है, उसी प्रकार खुश रहने की आदत हमें खुशी की तरफ अग्रसर करती है और दुखी रहने की आदत दुख की ओर ले जाकर, राई को भी पहाड़ बना देती है।

कर्मों की उलझी गुत्थी को सुलझाने के लिए सुख का चिन्तन कर, दूसरों को सुख देकर, सुखद स्थिति निर्मित करें। दुख देने का विचार ना तो स्वभाव में लाकर संस्कार बनने दें, ना ही उसका चिन्तन करके दुखी हों। सुख दें, सुख लें। खुद पर ही निगरानी रखकर, खुद के ही पहरेदार बनें। उदाहरण के लिए, जिस तरह व जिस भाव से हम धन कमाते हैं, भविष्य परिणाम भी उसी तरह के आते हैं। उस परिणाम के हम खुद भी भुक्तभोगी बनते हैं और परिवार-जन भी हमारे साथ दुख में दुखी व सुख में सुखी होते हैं। तो हमें धन भी 'नीति से कमाकर' 'रीति से' सदुपयोग करना चाहिए।

हमारा मन बहुत बड़े खेत के समान है जिसमें दुख निर्मित करने वाले, खरपतवार रूपी व्यर्थ विचार भी होते हैं और उपयोगी पौधे समान सुख निर्मित करने वाले सदुपयोगी संकल्प भी पैदा होते हैं इसलिए मन रूपी खेत को परमात्म छत्रछाया में, श्रीमत व याद रूपी खाद डालकर जोतना है, तब विकारों रूपी खरपतवार नहीं पनपेगी।

वर्तमान पुरुषोत्तम संगमयुग पर आकर भगवान सच्चा गीता ज्ञान देकर, जन्म-जन्मान्तर से बिगड़े कर्मों की गुत्थी को सुलझाने की श्रेष्ठ मत दे रहे हैं, जिसको हम रोज ईश्वरीय विद्यालय में जाकर बुद्धि के भोजन के रूप में ग्रहण कर सकते हैं और आत्मा पर से बुराइयों रूपी कीचड़ हटाकर, आत्मा को शुद्ध-सतोप्रधान बना सकते हैं। ■■■

श्रद्धांजलि

प्राण प्यारे बापदादा के अति स्नेही, अनन्य रत्न आदरणीय ब्र.कु.गोविन्द भाई ने गुजरात इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड के कार्यकारी निदेशक के पद पर रहते हुए सन् 1978 में ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त किया। सेवानिवृत्त होने के बाद गृहस्थ में रहते हुए तन-मन-धन से सम्पूर्ण ट्रस्टी बन बाबा की सेवाओं में तत्पर रहे। आपका प्यारे बाबा और यज्ञ के साथ अटूट प्यार रहा। आप नवसारी से सम्बन्धित सापुतारा (डांग) में आध्यात्मिक संग्रहालय बनवाने के निमित्त बने। आप बहुत ही निश्चयबुद्धि, एक बल एक भरोसे पर चलने वाली आत्मा थे। कुछ समय से आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। गुरुवार 21.03.19 को सायं करीब 5 बजे, अपना पुराना कलेवर त्याग 86 वर्ष की आयु में आप बापदादा की गोद में समा गए।

ऐसी यज्ञ स्नेही, अथक सेवाधारी, बापदादा और दादियों के दिलतख्तनशीन आत्मा को समस्त दैवी परीवार श्रद्धा सुमन अर्पित करता है।

पाप कर्मों के दुखों से कैसे बचें?

■■■ ब्रह्माकुमार डॉ.अजीत सिंह राणा, रोहतक (हरियाणा)

यह तो सर्वविदित है कि भूतकाल में किये गये पाप कर्मों की सजा मनुष्यात्मा, मन व शरीर दोनों के माध्यम से भोगती है। यहाँ प्रश्न यह है कि क्या ऐसे कर्म हो सकते हैं, जो भूतकाल में किये गये पाप कर्मों की सजा को नष्ट कर सकें? कर्म का नियम अटल है। कर्म सुखोत्पादक और दुखोत्पादक दोनों प्रकार के हो सकते हैं।

श्रेष्ठ कर्मों में वृद्धि

प्रत्येक श्रेष्ठ कर्म वर्तमान तथा भविष्य, दोनों कालों में खुशी प्रदान करता है। इसलिए श्रेष्ठ कर्म करते-करते हम अपनी खुशियों को इतना बढ़ा सकते हैं कि भूतकाल के पाप कर्मों की सजा की महसूसता को नष्ट किया जा सके। महात्मा बुद्ध ने भी कहा है कि हमारा वर्तमान, भूतकाल के किये गये अच्छे व बुरे कर्मों का विशुद्ध परिणाम है। यदि हम निरन्तर हर रोज ब्रह्ममुहूर्त में ईश्वर-स्मरण करें और दिन भर श्रेष्ठ कर्म करें तो श्रेष्ठ कर्म करने के हमारे संस्कार पक्के हो सकते हैं। भूतकाल में किये गये पापों के दुखों पर वे भारी पड़ कर हमें सदाकाल के लिए खुशी प्रदान कर सकते हैं।

योगाग्नि से पापों को भस्म करना

द्वापर युग से ज्यों ही पाप कर्म शुरू हुए, मानव ने पापों को नष्ट करने की कुछ न कुछ विधियाँ रची। इन विधियों में मुख्य रूप से नदी में स्नान, तीर्थ-यात्राएँ, हवन, यज्ञ, सत्संग, दान-पुण्य, प्रायश्चित आदि हैं। परन्तु बुद्धि कहती है कि ऐसा करने से कुछ श्रेष्ठ कर्म जमा तो हो सकते हैं लेकिन पूर्व के पाप नष्ट कैसे हो सकते हैं? कुछ लोग कहते हैं कि यह तो विश्वास की बात है परन्तु विश्वास भी ज्ञान पर आधारित होना चाहिए। जैसे गंगा के पानी से शरीर तो साफ हो सकता है परन्तु मन व आत्मा का मैल नहीं धुल सकता। भक्ति मार्ग में पापों को भस्म करने के लिए योग-अग्नि का जिकर भी है परन्तु आत्मा-परमात्मा का स्पष्ट परिचय न होने के कारण प्रभावी योग-अग्नि प्रज्वलित नहीं हो पाती। शिव परमात्मा ने प्रजापिता ब्रह्मा के मुख से स्वयं अपना व आत्मा तथा इन दोनों के परस्पर सम्बन्ध का स्पष्ट परिचय देकर राजयोग रूपी अग्नि से भूतकाल के पापों को भस्म करने की अचूक विधि सिखाई है। निरन्तर ज्वालामुखी योग के अभ्यास, तपस्या, साधना आदि से पाप शीघ्र भस्म होते जाते हैं। इससे आत्मा का सुख, शान्ति, खुशी, प्रेम आदि का पारा बढ़ता जाता है तथा आत्मा हल्की होती जाती है।

मैं और मेरे का यथार्थ ज्ञान

किसी सामान्य व्यक्ति से यदि पूछा जाये कि आप कौन हैं तो वह झट अपने शरीर तथा पद का ही नाम बतायेगा। भूला बैठा है कि वह अजर, अमर, अविनाशी तथा चैतन्य आत्मा है जिसकी स्मृति मात्र से उसको खुशी व सुख की महसूसता हो सकती है।

दूसरा, यदि पूछा जाए कि इस दुनिया में आपका कौन है? तो शरीर, शरीर के सम्बन्धी, धन-सम्पत्ति आदि ही याद आते हैं। ये सब अस्थाई हैं। ये सब मनुष्य के पास प्रकृति की अमानत के रूप में होते हैं। इस बात की निरन्तर अनुभूति तथा स्मृति व्यक्ति के मोहजाल को काट कर खुशी प्रदान कर सकती है। वस्तुत: उसका कुछ है तो वह है आत्मा के गुण और परमपिता परमात्मा शिव का प्यार। शिव पिता परमात्मा की याद से आत्मा में उन गुण और शक्तियों के संस्कार भर जाते हैं जो इस जन्म में ही नहीं बल्कि भविष्य के अनेक जन्मों तक साथ रहते हैं तथा बेहद का सुख, शान्ति, खुशी आदि प्रदान करते रहते हैं। श्रीमद् भगवद्गीता में भी कहा गया है, 'नष्टोमोटा स्मृतिर्लब्धा'। यदि आत्मा स्वयं के दिव्य

ज्योति बिन्दु स्वरूप में टिक कर इस स्मृति में स्थित रहे कि 'मेरा तो एक शिवबाबा दूसरा न कोई' तो इस तप से उसके अनेक जन्मों के पाप भस्म होकर वह जन्म-जन्मान्तर के लिए खुशियों के झूले में झूल सकती है।

लौकिक जज और पारलौकिक जज

जो व्यक्ति शिव पिता परमात्मा को अपने इस जीवन के पाप कर्मों का सच्चा ब्योरा देकर उनसे क्षमा मांगता है तथा भविष्य में ऐसे कर्म पुन: न करने की प्रतिज्ञा करता है तो उसकी आधी सजा माफ हो सकती है। कैसे? जैसे लौकिक में जज बाप अपने अपराधी पुत्र द्वारा, अपनी गलती स्वीकारने, हृदय से क्षमा मांगने, अपने आचरण में सुधार करने तथा फिर से ऐसी गलती न करने की बार-बार प्रतिज्ञा करने पर उसे कम से कम सजा दे सकता है। क्योंकि, सजा का उद्देश्य अपराधी को सुधारना ही होता है। जब लौकिक जज बाप ऐसे कर सकता है तो पारलौकिक जज परमात्मा पिता आधी सजा क्यों नहीं माफ कर सकता? बाकी बची हुई आधी सजा को उपरोक्त योगाग्नि से भस्म किया जा सकता है। इससे आत्मा पापों के दुखों से मुक्त हो सकती है।

बना-बनाया खेल

अनेक बार ऐसा महसूस होता है कि हम करना कुछ चाहते हैं परन्तु करते कुछ और हैं। मान लीजिए, सम्पत्ति आदि के झगड़े में पुत्र अपने पिता या भाई की हत्या कर देता है। फिर जेल जाकर कह उठता है कि वह ऐसा करना तो नहीं चाहता था परन्तु पता नहीं कैसे हो गया। इसी प्रकार, देश-प्रेम से भरपूर एक शिक्षित युवा फौज में भर्ती होकर देश-सेवा करना चाहता है परन्तु उसका कद कुछ कम होने के कारण वह भर्ती नहीं हो पाता अर्थात् वह मनचाहा कार्य नहीं कर पाता। इन सब घटनाओं से समझ में आता है कि इस सृष्टि रूपी नाटक में हम सभी पूर्व निर्धारित पार्ट बजाने के लिए बाध्य हैं। यह पार्ट भूतकाल में किये गये कर्मों व संस्कारों अनुसार ही मिलता है। सन्त कबीर जी ने कहा है, पहले बनी प्रालब्ध, फिर मिला शरीर अर्थात् पिछले जन्म के कर्मों के फल (प्रालब्ध) अनुसार ही शरीर (रोगी-निरोगी) मिलता है। इसलिए हमें वर्तमान में जो भी पार्ट मिला है, न्यायोचित यही होगा कि हम उसको अपने ही भूतकाल के कर्मों का फल समझ कर खुशी-खुशी पूर्ण करें, न कि दुखी होकर। मानव सृष्टि रूपी नाटक का ज्ञान समझ में आने से खुशी बढ़ जाती है तथा दुखों की महसूसता कम हो जाती है। ■■■

हम भारतवासी

ब्रह्माकुमार सुभाष सिंह तोमर, अलीगढ़

हर दिल अलख जगायेंगे, हम भारतवासी।
स्वर्ग धरा पर लायेंगे, हम भारतवासी।।
मानव-मानव में प्यार,
स्वर्ग धरा पर साकार,
ईश्वर-अल्लाह-गाड साथ है,
बनायें विश्व एक परिवार,
प्रेम दिलों में बसायेंगे, हम भारतवासी।
स्वर्ग धरा पर लायेंगे, हम भारतवासी।।
सर्वत्र फैलायें हम हर्ष,
शान्ति-प्रेम-दया-उत्कर्ष,
मानवता से भरपूर धरा,
हो प्यार भरा हर वर्ष,
दिलों को निकट लायेंगे, हम भारतवासी।
स्वर्ग धरा पर लायेंगे, हम भारतवासी।।
हर दिल में बसायें ईश,
नफरत, घृणा अब उन्नीस,
सर्वत्र फैलायें प्रेम-तरंग,
जगायें दिलों में लव और पीस,
मानवता फर्ज निभायेंगे, हम भारतवासी।
स्वर्ग धरा पर लायेंगे, हम भारतवासी।।

इतनी मेहनत किसलिए?

■■■ ब्रह्माकुमारी ललिता, विकासपुरी, नई दिल्ली

जीवन हमारे लिए है, न कि हम जीवन के लिए। शरीर अमूल्य वरदान है प्रकृति का। प्रकृति ने कितने प्रेम से हमें सब सुविधाएँ दी हैं ताकि हम खुशहाल रहें और प्रकृति की रेशमी गोद में अपनी थकान मिटा लें। कितने खूबसूरत फूल, पत्ते, पौष्टिक शाक-सब्जियाँ हमारे लिए उसने उपहार में दिए। दूर तक फैला, निरंतर रंग बदलता आसमान, दिन में स्वर्णिम सूरज से और रात्रि में चांदी के रंग के चाँद और सितारों से शृंगारित सृष्टि-रंगमंच हमें रिझाने की कोशिश करता रहता है। धरती पर फैली हरियाली, संगीत की लहरियाँ छोड़ती नदियाँ, झरने, सागर सब हमारे लिए ही तो बनाये गये हैं? ऊँचे-ऊँचे गगनचुम्बी पर्वत अपनी शोभा किसके लिए बिखेर रहे हैं?

और हम! क्या हमने अपने जीवन में इस सौंदर्य को निहारने के लिए समय छोड़ा है? क्या कभी इस मुफ्त की सुंदरता के लिए आभार व्यक्त किया है? क्या कभी इसे और सँवारने का प्रयास किया है? अरे! संवारना तो दूर कभी इसे कम से कम ज्यों का त्यों रखने का भी प्रयास किया है? उल्टा इसका शोषण कर, इसे खोखला करने में हमने कोई कसर नहीं छोड़ी है।

बेमोल चीजों की कदर नहीं और मोल से वस्तुएँ खरीदने के लिए आज पैसा कमाने की अंधी दौड़ में दौड़ते चले जा रहे हैं हम। मैंने बहुत लोगों को देखा है कि मशीन की तरह काम करते हैं वे सुबह से रात तक। यदि रात न आये तो वे आगे भी चक्करघिन्नी बन घूमते रहें। खाना खाने की फुर्सत नहीं, परिवार से बात करने का, उनके साथ कुछ पल बिताने का समय नहीं, और तो और जिस शरीर से इतना काम लेते हैं, उसको भी नजरअंदाज कर जाते हैं ये लोग! बहुत बार दवाई लेकर भी काम पर निकल जाते हैं और दवाई साथ भी ले जाते हैं ताकि कोई कमजोरी, बीमारी उनके काम में रुकावट न डाले। कोई ब्लड प्रेशर, मधुमेह, बुखार, सिरदर्द इन्हें काम करने से नहीं रोक पाता। कई-कई लोग तो टूटी टांग-बाँह लिए व्हील चेयर पर भी काम करने निकल जाते हैं। काम, इनके लिए नशा बन गया है, यह कहें तो भी शायद गलत न होगा।

कोई पूछे इनसे जरा, इतना काम, इतनी मेहनत किसके लिए? इनका एक ही उत्तर होता है, 'अरे करना पड़ता है। इतनी जिम्मेवारियाँ हैं, परिवार है, बच्चों की पढ़ाई है...।'

हम सब भली-भाँति अनुभव कर चुके हैं कि अगला पल भी हमारे हाथ में नहीं है। हम अगले क्षण के लिए कुछ और सोच कर बैठे होते हैं और वह पल अजीब-सी सौगात लिए हमारे दरवाजे पर खड़ा हमें हक्का-बक्का छोड़ देता है। सोच रहे होते हैं बाजार शॉपिंग करने जाने की और किसी दुर्घटना की खबर लिए फोन घनघना उठता है। बनाना चाहते हैं बच्चे को डॉक्टर और वो एक्टिंग लाइन में जाने की जिद्द पकड़ बैठता है।

यह कोई नई बात नहीं है। इतनी भागमभाग परिवार के लिए या समाज में ऊँची नाक रखने के लिए या लालच की तिजोरी भरने के लिए या भविष्य सुरक्षित बनाने के लिए या बच्चों को बढ़िया काम खोल कर देने के लिए या सुनारों का काम-धंधा चलाने के लिए? किसलिए?

पैसा जरूरी है। निस्संदेह जरूरी है लेकिन हमें याद रखना चाहिए कि पैसा हमारे लिए है, न कि हम पैसे के लिए। पैसा जरूरतें पूरी करने का, खुद को और खुद के परिवार को आरामदायक जीवन मुहैया कराने का जरिया

होता है। लेकिन दूसरे से बेहतर जीने की इच्छा को हम अपना लक्ष्य बना लेते हैं। एक लक्ष्य की प्राप्ति के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा और इस सिलसिले का कोई अंत नहीं। सीधे शब्दों में इसे लालच कहा जाता है और लालच का कोई अंत नहीं। इच्छाएँ तो सीमाहीन होती हैं। ये तो राक्षस रक्तबीज की तरह होती हैं। एक को मारो तो उसके लहू की बूँदों से सैकड़ों और पैदा हो जायेंगे। इच्छाओं को मारना नहीं है लेकिन उनके पीछे मतवाले-बावरे होकर दौड़ना भी नहीं है। ये दौड़ व्यक्ति को केवल एक धावक बना कर छोड़ती है और उससे उसका अस्तित्व तक छीन लेती है। कहीं तो थमना होगा, रुकना होगा, संतोष करना होगा कि बस दौड़ पूरी हुई। बहुत लोग अभी भी दौड़ रहे होंगे, कुछ धीमे और कुछ तेज। हमें उन्हें नहीं देखना है बल्कि अपना देखना है कि क्या हमें और आवश्यकता है? यदि हाँ तो रेस जारी रखो, नहीं तो रुक जाओ। हम सब कुछ प्राप्त कर लें, यह संभव नहीं। कहीं न कहीं, हर किसी को, कोई न कोई कमी अवश्य होती है। यह स्वीकार करने से सच में शान्ति मिलती है।

इच्छाओं, जरूरतों पर अंकुश होना बहुत आवश्यक है। हमें जीना है, भरपूर जीना है। हँसते-खेलते-मुसकराते जीना है। कभी अपने लिए और कभी अपनों के लिए और कभी दूसरों के लिए, जीवन में रंग भरने हैं, खूबसूरत रंग ताकि मरते हुए कोई 'काश' न रहे। याद रहे कि जिन्दगी के सुख, धन के पर्यायवाची नहीं हैं। जो सुख बच्चों के साथ बैठ लूडो खेलने में है वो बैंक अकाउंट में शून्य बढ़ाने में नहीं है। जो सुकून प्रात:काल नदी किनारे बैठ उसका संगीत सुनने में है वो महंगे शॉपिंग मॉल की चौंधियाती रोशनी में शॉपिंग करने में नहीं है। इतना न भागो कि सांस उखड़ने लगे और जी भर जीवन को देखने का मौका तक न मिले। खाओ इतना कि हजम हो जाए। अति किसी भी वस्तु की हो, दुखदायी ही होती है। ■■■

कैसे मिलें स्वास्थ्य और खुशी?

■■■ ब्रह्माकुमार परमानन्द पटैरिया, ग्राम ननौरा, महोबा (यू पी)

व्यक्ति जीवनयापन के लिए कोई न कोई धन्धा अवश्य करता है। जीवनयापन के लिये तीन चीजें आवश्यक हैं, स्वास्थ्य, धन और खुशी। लेकिन आज व्यक्ति केवल धन पर ही अपना ध्यान केंद्रित करता जा रहा है। वह समझता है कि धन की भरपूरता होने पर इस के द्वारा अन्य आवश्यकताओं को आसानी से पूरा किया जा सकता है। धन के प्रति इसी आकर्षण के कारण नौकरी मिल जाने पर कर्मचारी और अधिकारी केवल वेतन से संतुष्ट नहीं हैं। वे ऊपरी आमदनी अधिक से अधिक प्राप्त करने की युक्तियाँ सोचते व अपनाते हैं। कर्तव्यनिष्ठा, देशसेवा और समाजसेवा की भावना समाप्त-सी हो गई है। सब जानते हैं कि सरकारी योजनाओं के लिए भेजा गया धन किस प्रकार विभिन्न कमिशनखोरों द्वारा खा और पी लिया जाता है। अब तो उन्हें कमिशन मांगने में शर्म भी नहीं आती है, शायद वे इसे अपना पदीय अधिकार समझने लगे हैं।

कुछ वर्षों पहले जब व्यक्ति अपना व्यवसाय कर्तव्यनिष्ठा, ईमानदारी, समाजसेवा और देशसेवा की भावना से करता था तब उसे धन, स्वास्थ्य और खुशी तीनों ही चीजें प्राप्त हो जाती थी। परन्तु, अब हाल उल्टा है इसीलिए चालाकी और चतुराई से धन तो पा जाते हैं परन्तु न स्वास्थ्य मिलता है और न ही ख़ुशी। आज लोगों में बढ़ती बीमारियाँ, डिप्रेशन, उदासी और निराशा आदि इसी सत्य को सिद्ध कर रहे हैं। हमें यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि चतुराई , चलाकी, ठगी व भ्रष्टाचार से हम धन तो प्राप्त कर सकते हैं परंतु स्वास्थ्य व खुशी नहीं पा सकते जो कि जीवन के लिए परमावश्यक हैं। अत: हमें अपनी विचारधारा को बदल कर पूरी निष्ठा के साथ अपना व्यवसाय करना चाहिए। ■■■

मेरा भारत, व्यसन मुक्त भारत

■■■ ब्रह्माकुमार रामलखन, शान्तिवन-आबूरोड (राज.)

दस रुपये से लेकर दस हजार रुपये तक रोज खर्च करने वाले चालीस करोड़ से भी अधिक भारतीय शराब, सिगरेट, बीड़ी, तम्बाकू, गुटखा, गाँजा, भाँग, पान, मसाला, ब्राउन शुगर, स्मैक, अफीम, चरस, हेरोइन जैसी नशीली चीजों के आदती हैं।

प्रतिदिन 40 अरब का नुकसान

नशा करने वाले लोग कम से कम एक दिन में इन पर दस रुपये तो खर्च कर ही देते हैं। इससे ऊपर पचास, सौ, दो-चार-पाँच सौ रुपये खर्च करने वालों की संख्या भी करोड़ों में है। हजार-दो-चार-पाँच-सात हजार रुपये नियमित खर्च करने वालों की भी कमी नहीं है। लाखों में कुछ ऐसे लोग भी हैं जो रोज दस-बीस हजार रुपये तक उड़ाने में भी नहीं चूकते हैं। यदि नशा करने वाले सभी व्यक्तियों का प्रति व्यक्ति औसत खर्च 100 रुपया ही मान लिया जाए तो भारत के 40 करोड़ नशा करने वाले, चालीस अरब रुपये प्रतिदिन नशे की गन्दी लत में उड़ेल देते हैं। इतने खर्च से तो भारत की सम्पूर्ण सुरक्षा व्यवस्था चल रही है। फिर इससे उत्पन्न होने वाली बीमारियों, दुर्घटनाओं, घरेलू कलह-क्लेश, प्रदूषण, गन्दगी आदि को ठीक करने में भी करीब इतना ही धन व्यर्थ हो जाता है। ऐसे लोगों की मानसिक एकाग्रता भी डाँवाँडोल होती है। फलस्वरूप वे दो घण्टे के कार्य को चार घण्टे में भी बहुत अच्छी तरह नहीं कर पाते हैं। इसके साथ ही बहानेबाजी, आलस्य तथा लड़ने-झगड़ने आदि में ऐसे लोग तो उससे भी ज्यादा आगे होते हैं।

नशामुक्ति के लिए युद्ध-स्तर पर काम करना अनिवार्य

देश का बजट और इन व्यक्तियों की मजबूरी पर ध्यान केन्द्रित कर उनको नशे की पराधीनता से मुक्त करने के लिए नई जागृति लाई जाए तो कुछ ही वर्षों में पुन: भारत विश्व में सिरमौर बन सकता है। जैसे स्वतंत्रता संग्राम को भारत के सभी लोगों ने एकजुट होकर जीता, वैसे ही इस मानसिक पराधीनता वाली आदत को युद्ध-स्तर पर, आध्यात्मिक आधार लेकर आसानी से जीता जा सकता है अन्यथा बुरी आदतों के गुलाम लोग, दुनिया के दु:खों की गुलामी को कैसे दूर कर सकेंगे?

निशाने पर हैं अविकसित और विकासशील देश

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, हर साल 30 से 40 लाख लोग नशीले पदार्थों के कारण काल के गाल में समा जाते हैं। इससे दसियों गुना लोगों का पारिवारिक जीवन उजड़ जाने से वे मौत से भी बुरी जिन्दगी जीते हैं। बहुत-सी गर्भवती महिलाओं के गर्भस्थ शिशुओं का विकास ऐसे ही कारणों से बाधित हो जाता है। बच्चों में विकलांगता व मंदबुद्धि होने का यह सबसे बड़ा कारण है। दुनिया की बहुसंख्यक बीमारियों की जननी मद्यपान को ही माना जाता है। संसार की सम्पूर्ण सेनाओं और हथियारों पर जितनी सम्पदा खर्च होती है उससे भी अधिक अनावश्यक खर्च मादक पदार्थों पर परवान चढ़ जाता है। इस गोरखधंधे में लगे लोग ही आतंकवाद, चोरी, डकैती, अपहरण, बलात्कार, चोरबाजारी, तस्करी जैसे कामों को बढ़ावा देने में मुख्य भूमिका निभाते हैं जिसकी रोकथाम में दुनिया के अनेकों जवान शहीद हो जाते हैं। सभी नशीले पदार्थ सर्वनाश के ही निमित्त बनते हैं परन्तु शराब का स्थान उनमें सर्वोच्च माना जाता है। विकसित देशों में नशीले पदार्थों के ऊपर कठोर प्रतिबन्ध लग जाने के कारण इनकी उत्पादक कम्पनियाँ अपने माल की खपत के लिए अब विकासशील तथा अविकसित देशों को निशाना बनाती जा रही हैं।

वासनाओं से इन्द्रियाँ कभी तृप्त नहीं होती

मद्यपान और सद्-विवेक साथ-साथ नहीं चल सकते। विवेक-बुध्दि द्वारा जीवन को चाहें तो खुशहाल-बोधस्वरूप बनाइये या फिर वासनाओं की गन्दी गलियों में भागते-रोते-हाँफते रहिये। मद्यपान ऐसी मृगमरीचिका है जिसके पीछे भागने वाली आत्मा अपनी सम्पत्ति, स्वास्थ्य, सौन्दर्य, समय, सम्बन्ध व ऊर्जा गंवाने के सिवाय कुछ भी नहीं पाती है। यह अतृप्ति का ऐसा दलदल है जिसमें मनुष्य पाता कुछ नहीं परन्तु बहुत कुछ पाने की चाहत में डूबता ही चला जाता है। पार उतरने की तो बात ही छोड़ो, एक भी किनारा नहीं मिलता है। निरर्थक आदतों के पीछे जीवन को व्यर्थ गंवा देता है। मादक वासनाओं से इन्द्रियाँ कभी तृप्त नहीं होती हैं वरन् चाहतें विकराल रूप धारण करती ही जाती हैं। मनुष्य और अधिक चाहत की खाई में डूबता-उतराता हुआ अन्त में बहुत कुछ सर्वनाश कर बैठता है।

शराब नष्ट कर देती है मस्तिष्क के कोषों को

किसी देश की युवा पीढ़ी में मादकता के अति सेवन की आदतें डाल दो तो वह देश स्वत: ही विनष्ट होता जायेगा। शराब पीने के कुछ देर बाद ही इसका एल्कोहल, खून में मिलकर रक्त कोशिकाओं के माध्यम से सारे शरीर में फैल जाता है। इसके विजातीय विष को बाहर निकालने के लिए शरीर के सम्पूर्ण तंत्रिका-तंत्र को बहुत अधिक मेहनत करनी पड़ती है। सर्वाधिक संवेदनशील आँतों में पहुँचकर यह व्यक्ति के पेट को परमानेंट रोगी बना देती है। मस्तिष्क के कोषों को निष्क्रिय कर उन्हें नष्ट करती जाती है। मस्तिष्क के सूक्ष्म कोष एक बार क्षतिग्रस्त हो जाने पर कभी भी सुचारु रूप से कार्य नहीं कर पाते हैं।

वासनाओं में शान्ति कहाँ?

चाहे मद्यपान का नशा हो या काम, क्रोधादि विकारों का ज्वर, इनका अन्त दु:खदायी ही होता है। सभी वासनायें अनन्त कामनाओं से भरी होती हैं। अनगिनत चाहतों के असंतुलन की अतृप्ति भला सुख व शान्ति कैसे दे सकती है? परिणामस्वरूप, दु:ख व अशान्ति के गहरे गर्त में गिरकर व्यक्ति रोग व शोक का उत्तराधिकारी बन जाता है। चाहे जीभ के स्वाद की चाहना हो या इन्द्रियों की वासना, इनकी जलन में न शान्ति है और न ही विश्राम। अन्तहीन सिलसिले वाली ऐसी कामनायें जब उठती हैं तो वे आग में पेट्रोल डालने की तरह भड़कती जाती हैं। फिर तो वे नष्ट-भ्रष्ट करके ही रुकती हैं। नशे के प्रभाव में इन्द्रियों को लगता है कि सुख मिलेगा परन्तु अन्तिम परिणाम बहुत ही कष्टकारक होता है।

घेर लेती हैं जानलेवा बीमारियाँ

उच्चता के मार्ग में किसी भी प्रकार का नशा भयानक खतरा है। लोग आधुनिक दिखने की चाहतों में मादकता के चंगुल में फंसते जाते हैं। लुभावने विज्ञापनों को देख या गलत शोहबत के दबाव में आकर खाने-पीने-मौज उड़ाने के शिकार हो जाते हैं। जीवन की परेशानियों, चिंताओं से मुक्ति पाने के लिए नशे में डूबे ही रहना चाहते हैं। किसी भी कारण से मद्यपान की आदत पड़ जाने के बाद बारम्बार खाने-पीने-पिलाने के लिए विवश हो जाते हैं। उनके स्नायुमण्डल इतने कमजोर व शिथिल हो जाते हैं कि उन्हें वासनाओं के सामने घुटने टेकने ही पड़ते हैं। फिर तो गिरावट का सिलसिला बढ़ता ही जाता है। शराब से स्फूर्ति और प्रेरणा वाली धारणा एकदम निराधार है। मदिरापन करते ही व्यक्ति मानसिक के साथ-साथ शारीरिक गतिविधियों पर संयम नहीं रख सकता है। फलस्वरूप, वह उन्मत्त व्यवहार करता हुआ आत्म-नियंत्रणहीन हो गिर पड़ता है। स्मृति ह्रास होने से उसमें निर्णय करने तथा परखने की शक्ति की कमियाँ आ जाती हैं। कमजोरी व चिड़चिड़ेपन के कारण वह अनेकों अपराधिक वृत्तियों की ओर उन्मुख होने लगता है। उसकी बिगड़ी रक्त संचरण क्रियाओं का सीधा असर दिल और दिमाग पर पड़ता है जिससे रक्त-अल्पता, रक्तचाप, डायबिटीज जैसी जानलेवा बीमारियां घेरने लगती हैं। मद्यपान की निरन्तरता पेट,

यकृत, फेफड़े जैसे अति संवेदनशील अंगों को बिगाड़ देती है। ऐसे खोखले व्यक्ति गृह-कलह, आर्थिक तंगी, बीमारी, संतानों में विकलांगता तथा पागलपन के शिकार होते ही रहते हैं।

राजयोगी जीवनशैली से व्यसनों पर विजय सम्भव

विद्वानों, मनोवैज्ञानिकों व चिकित्सकों द्वारा इसके प्रलयंकारी परिणामों को बताते रहने पर भी लोग ऐसी बुरी आदतों से मुक्ति क्यों नहीं पा रहे हैं? यदि दृढ़ इच्छाशक्ति जाग जाए तो व्यक्ति क्या, समाज और राष्ट्र को भी नशामुक्त किया जा सकता है। अच्छी राजयोगी जीवन-शैली से पुराने से पुराने व्यसनों की लत सहज रीति से छोड़ी जा सकती है। इसके लिए होमियोपैथी की मीठी गोलियों का भी सहयोग लिया जाता है। व्यसन मुक्ति से घर, परिवार, व्यक्ति, समाज ही नहीं, पूरा राष्ट्र ही नैतिकता सम्पन्न राष्ट्र बन जायेगा। व्यसनों की बेड़ियों से मुक्त हो लोग अपनी कार्यक्षमता और ओजस्विता बढ़ाते जायेंगे। इसी प्रकार से ही स्वर्णिम, स्वस्थ और आभामय भारत का निर्माण किया जा सकेगा। मद्यपान के साथ-साथ फिर तो सभी विकार-बुराइयों का भी नामोनिशान मिट जायेगा।

वासनाएँ हैं आग के दरिया के समान

क्षणिक खुशी और भाव शून्यता का अहसास देने वाली वासनाएं वास्तव में आग के दरिया के समान हैं। उनसे मात्र सुख का दिखावा होता है परन्तु उनकी तपिस व्यक्ति क्या, समाज और राष्ट्रों को भी जला देती है। इनका साक्षात् उदाहरण अफगानिस्तान, पाकिस्तान जैसे निकट पड़ोसियों में देखा जा सकता है। मद्यपान के व्यापार ने ही वहाँ धार्मिकता व आतंक का हाहाकार मचाया हुआ है। वासनाओं में डूबे लोग विषधर सर्प से भी अधिक फुंफकारते हैं जबकि कुछ ही दशकों पहले अफीमची कहे जाने वाले चीनी लोगों को कुछ जागरूक लोगों ने पूर्ण मद्यनिषेध के बंधन में बाँध दिया तो अब चीन की गिनती महाशक्तियों में होने लगी है। मद्यपान करने वाले लोग बुराइयों के आगे-पीछे भटकते ही रहते हैं। अन्तहीन वासनाओं से भला कौन संतुष्ट हो पाया है? कुछ ही भाग्यशाली लोग मौत से पहले इनकी भटकन से उबर कर राजहँसों की तरह राजयोगी बन पाते हैं।

मद्य-निषेध वाले राज्यों की हालत में सुधार

कितना ही त्याग-बलिदान व खर्च करना पड़े, गुजरात राज्य को उदाहरण बना करके 'मेरा भारत-व्यसन मुक्त भारत' का डंका बजाना ही होगा। परिश्रम के बिना अत्यधिक आमदनी चाहने वाले व्यवसायी, वासनाओं व बुराइयों को खराब मानते ही नहीं हैं। वे तो विष को ही अमृत साबित करने के लिए तरह-तरह के लाभ दिखाने में तुले रहते हैं। मद्यपान से शान्ति और सुख को वैज्ञानिकों और डॉक्टरों ने पूरी तरह से नकार दिया है। नशे के कारण ही अपराधिक घटनाओं और दुर्घटनाओं में अति वृद्धि हो रही है। मद्य-निषेध लागू करने वाले प्रान्तों की हालत दिन दूनी, रात चौगुनी सुधर रही है। ऐसे नशामुक्त मजदूर, किसान, नौकरीपेशा व व्यापारी लोग कुशल और ऋणमुक्त होकर आनन्दमय जीवन बिता रहे हैं। समाज में उनकी प्रतिष्ठा भी बढ़ती जाती है। मदिरा, धूम्रपान, मिलावट व चोरबाजारी से मुक्त समाज ही संभ्रान्त स्वरूप धारण कर पायेगा। मद्यपान रूपी मृगमरीचिका के पीछे भागना सच में बड़ी मूर्खता है। ईश्वरीय ज्ञान-योग से, नशे को जला डालने की युक्ति और शक्ति मिलती है। प्रज्ञावान व्यक्ति उसे ही कहेंगे जो समय की पुकार के अनुसार शुभ, सत्य और सौन्दर्य का वरण कर ले। तम्बाकू, गुटखा, अफीम जैसे उत्पादों की सरकारी नियन्त्रण की फैक्ट्रियों में ही प्रोसेसिंग करायी जाए अन्यथा सर्वनाश की जड़ नशा दिनोंदिन और भी दु:खदायी स्वरूप धारण करते हुए भारत को आतंकी, अपाहिज, कंगाल व रोगालय बना देगा जबकि भारत तो सारे संसार का मुकुटमणि था। ■■■

'ओम शान्ति' ने कराया शान्ति का अनुभव

■■■ ब्रह्माकुमार सत्यप्रकाश तिवारी, तिलहरी, जबलपुर (म.प्र.)

मेरे छोटे बेटे अभिषेक तिवारी की आत्मा 25 वर्ष की शारीरिक उम्र में, 14 अक्टूबर, 2016 को अपना पुराना शरीर छोड़कर चली गई। हमारे पूरे परिवार को कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था कि अब कैसे और कहाँ से जीवन को आगे बढ़ाया जाये। तभी मेरी छोटी बहन हमारे घर आई, जो पूना में रहती है। उसने हम दोनों को कहा, दुखी मत होवो, शिव बाबा द्वारा दिया ज्ञान सीखो तो इस जीवन के और जीवन के बाद के हर प्रश्न का जवाब मिल जायेगा। हमने पूछा, शिव बाबा के ज्ञान के लिए हम लोगों को कहाँ जाना होगा? उसने कहा, जबलपुर में शिवबाबा का ज्ञान सिखाया जाता है। पता लगाते-लगाते हम ब्रह्माकुमारीज, कटंगा सेवाकेन्द्र में पहुँचे। वहाँ हमें एक ब्रह्माकुमारी बहन मिली। हमने उनसे हाथ जोड़कर नमस्ते किया। उन्होंने जवाब दिया, 'ओम शान्ति'। यह शब्द हमने जीवन में पहली बार सुना था। इस एक शब्द ने ही हमें उस दुख की घड़ी में, जब मन अशान्त था, कुछ शान्ति का अनुभव कराया। हमने सोचा, जब एक शब्द इनके मुख द्वारा हमें शान्ति का हल्का-सा अहसास दे सकता है, तो हम ज्यों-ज्यों इसकी गहराई में उतरते जायेंगे, सबसे अनमोल चीज शान्ति का अनुभव मिलता ही जायेगा।

फिर हम युगल ने ब्रह्माकुमारीज सेवाकेन्द्र पर नियमित जाना शुरू कर दिया। निमित्त बहन ने हम दोनों को सात दिन का कोर्स रोज एक घन्टे कराया, जिसमें सृष्टि, आत्मा, परमात्मा, जन्म और मृत्यु का परिचय दिया गया। फिर हमें बताया गया कि आप तिलहरी में रहते हैं और अब बिलहरी में सेवाकेन्द्र खुल गया है, आप लोग वहाँ भी जा सकते हैं, वह आपको नजदीक पड़ेगा। फिर जब हम लोग इस सेवाकेन्द्र में आये तो हमारी मुलाकात ममता की साक्षात् मूर्त दो बहनों से हुई। इन बहनों से और ईश्वरीय विश्व विद्यालय में आने वाले भाई-बहनों से मिलकर घर-परिवार और अपनेपन का अनुभव हुआ।

ईश्वरीय ज्ञान में आने के बाद मन से सिर्फ एक ही आवाज निकलती है कि हमने अपने जीवन के 55 वर्ष यूँ ही गवाँ दिये। शिव बाबा का ज्ञान धारण कर पवित्र बनने का मतलब यह नहीं है कि यह सिर्फ दुखी या बुजुर्ग या सेवानिवृत्त लोगों के लिए है। ऐसा सोचने का मतलब भी अज्ञानता ही है। यह ज्ञान सभी धर्मों-वर्गों के लिए है। यहाँ कोई, किसी को भाई-बहन नहीं बनाता और न ही भक्ति-पूजा आदि के लिए मना किया जाता है। परमपिता परमात्मा से दुआ है कि वह हमारे इस जन्म के पार्टधारी पुत्र की आत्मा को खुश रखे और अपने ज्ञान में उसे भी शामिल करे। ■■■

सदस्यता शुल्क:

(भारत) वार्षिक: 100 /- आजीवन : 2,000 /-
(विदेश) वार्षिक - 1,000/- आजीवन - 10,000/-

शुल्क ड्राफ्ट या ई-मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता :

'ज्ञानामृत', ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन- 307510
(आबू रोड) राजस्थान, भारत।

For Online Subscription: **Bank**: State Bank of India, **A/c Holder Name :** Gyanamrit, **A/c No:** 30297656367
Branch Name : PBKIVV, Shantivan, IFSC Code : SBIN0010638

☺ अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क सूत्र : ☺ Ph. 02974-228125
Mobile: 09414006904, 09414423949, **Email:** hindigyanamrit@gmail.com, omshantipress@bkivv.org

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, मुख्य सम्पादक एवं प्रकाशक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबूरोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन-307510, आबूरोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया।
मुख्य सम्पादक - ब्र.कु. आत्मप्रकाश, **सम्पादक** - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन

फोटो, लेख, कविता या अन्य प्रकाशन सामग्री के लिये :

E-mail : gyanamritpatrika@bkivv.org, omshantiprintingpress@gmail.com, Website: gyanamrit.bkinfo.in